दिसंबर
2024

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 88 | अंक — 12 | प्रति — ₹ 25 | ₹ 300 वार्षिक

8 ▶ कभी निष्फल नहीं जाती गायत्री—उपासना

26 ▶ बंधन नहीं शक्ति है एकांत

35 ▶ ध्यान से होती है सुख की प्राप्ति

47 ▶ भविष्य के भारत की भूमिका लिखता भारत

गायत्री - साधना से अनेक प्रयोजनों की सिद्धि

गायत्री मंत्र सर्वोपरि मंत्र है। इससे बड़ा और कोई मंत्र नहीं। जो काम संसार के किसी अन्य मंत्र से हो सकता है, वह निश्चित रूप से गायत्री द्वारा हो सकता है। दक्षिण मार्गी योगसाधक वेदोक्त पद्धति से जिन-जिन कार्यों के लिए अन्य किसी मंत्र से सफलता प्राप्त करते हैं, वे सब प्रयोजन गायत्री से पूरे हो सकते हैं। इसी प्रकार तांत्रिक जो कार्य तंत्र-प्रणाली से किसी मंत्र के आधार पर करते हैं, वह सब भी गायत्री द्वारा किए जा सकते हैं। यह एक प्रचंड शक्ति है, जिसे जिधर भी लगा दिया जाएगा, उधर ही चमत्कारी सफलता मिलेगी।

काम्यकर्मी के लिए, सकाम प्रयोजनों के लिए अनुष्ठान करना आवश्यक होता है। सवा लक्ष का पूर्ण अनुष्ठान, चौबीस हजार का आंशिक अनुष्ठान अपनी-अपनी मर्यादा के अनुसार फल देते हैं। जितना गुड़ डालो, उतना मीठा वाली कहावत इस क्षेत्र में भी चरितार्थ होती है। साधना और तपश्चर्या द्वारा जो आत्मबल संग्रह किया गया है, उसे जिस काम में भी खरच किया जाएगा, उसका प्रतिफल अवश्य मिलेगा। बंदूक उतनी ही उपयोगी सिद्ध होगी, जितने बढ़िया और जितने अधिक कारतूस होंगे। गायत्री की प्रयोग विधि एक प्रकार की आध्यात्मिक बंदूक है। तपश्चर्या और साधना द्वारा संग्रह की हुई आत्मिक शक्ति कारतूसों की पेटी है।

दिसंबर – 1949
पृष्ठ – 22

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	88
अंक	:	12
दिसंबर	:	2024
मार्गशीर्ष-पौष	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.11.2024

वार्षिक चंदा

भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय)		
भारत में	:	6000/-

स्वाधीन भारत

स्वाधीन भारत की स्वाधीनता—प्रसन्नता व पीड़ा के आँसू एक साथ लेकर आई। प्रसन्नता पराधीनता समाप्त होने की थी। पीड़ा भारत देश के विभाजन की थी। पता नहीं 14 अगस्त, 1947 ई. के दिवस से लेकर मध्य रात्रि, फिर 15 अगस्त, 1947 की रात्रि का शेष भाग और प्रात:काल के क्षण स्वयं भारतमाता की दैवी चेतना के लिए कैसे रहे होंगे? उसे स्वतंत्रता की खुशी अधिक रही होगी अथवा उसकी अपनी ही संतानों द्वारा किए गए स्वयं के विभाजन का दरद अधिक रहा होगा? यह सत्य या तो स्वयं भारतमाता ने अनुभव किया होगा या फिर उसने—जिसने अपना मन-प्राण, व्यक्तित्व-अस्तित्व, साधना का सर्वस्व सब कुछ भारतमाता में समाविष्ट कर दिया था। स्वाधीन देश की समस्याएँ अनेक थीं। जो गए थे, वे यहाँ से समृद्धि-संपदा लूटकर ले गए थे। लुटेरे लूट का माल लेकर गए थे, लेकिन लूट का समूचा दु:ख-दरद हम सबके लिए छोड़ गए थे। सोने की चिड़िया कहा जाने वाला देश अब कंगाल था। अशिक्षा, भुखमरी, अंतरराष्ट्रीय अवस्था, जाति, क्षेत्र, भाषा एवं धर्म के अनेकों आंतरिक मतभेद-मनभेद। इन लकीरों के साथ रियासती राजाओं के अभिमान, पड़ोसी देशों की कुदृष्टि।

अँगरेज संपदा के नाम पर यही विपदा छोड़कर गए थे। इस विपदा की सबसे बड़ी विपत्ति यह थी कि देश का पहनावा, देश की बोली, देश का खान-पान, देश की संस्कृति को अपने ही देशवासी हीन और हेय समझते थे। राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हुआ देश अभी भी सांस्कृतिक रूप से परतंत्र व पराधीन था। युगऋषि की युगदृष्टि ने इस युगसत्य को देख लिया था। अब उनके कार्य का केंद्र यही था। ❐

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विषय सूची

❊ आवरण—1 1
❊ आवरण—2 2
❊ स्वाधीन भारत 3
❊ **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
भारतीय दृष्टिकोण में भावनाएँ 5
❊ कभी निष्फल नहीं जाती गायत्री-उपासना 8
❊ ईश्वर के यहाँ देर है, अंधेर नहीं 12
❊ तप 14
❊ दीर्घायु जीवन के सूत्र 17
❊ **पर्व विशेष—गीता जयंती**
निष्काम कर्म ही कर्मयोग है 20
❊ कर्मयोग का मर्म 23
❊ बंधन नहीं, शक्ति है एकांत 26
❊ सुखी एवं सफल जीवन 28
❊ आंतरिक महासमर में हमें जीतना ही होगा 31
❊ पतझड़ के मौसम की रंग-बिरंगी छटा 33
❊ ध्यान से होती है सुख की प्राप्ति 35
❊ **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा—27**
अध्यात्म की प्रतिमूर्ति 37
❊ भारतीय संस्कृति के निहितार्थ 39
❊ **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—188**
स्वास्थ्य पर्यटन पर शोध 42
❊ **युगगीता—295**
सात्त्विक त्याग के लक्षण 45
❊ **विश्वविद्यालय परिसर से—234**
भविष्य के भारत की भूमिका लिखता भारत 47
❊ **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
ज्ञान की गंगा का अवतरण 51
❊ **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
नदियों एवं समुद्रों में दैवी प्रकाश 60
❊ **अपनों से अपनी बात**
उद्देश्यपूर्ण जीवन का आधार 63
❊ गीता का दर्शन (कविता) 66
❊ आवरण—3 67
❊ आवरण—4 68

आवरण पृष्ठ परिचय

योगेश्वर श्रीकृष्ण अर्जुन के साथ

दिसंबर, 2024 व जनवरी, 2025 के पर्व-त्योहार

बुधवार	11 दिसंबर	मोक्षदा एकादशी/गीता जयंती	सोमवार	13 जनवरी	प्रयाग कुंभस्नान
रविवार	15 दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती	मंगलवार	14 जनवरी	मकर संक्रांति
बुधवार	25 दिसंबर	क्रिसमस	शुक्रवार	17 जनवरी	संकष्ट चतुर्थी
गुरुवार	26 दिसंबर	सफला एकादशी	गुरुवार	23 जनवरी	नेताजी सुभाष जयंती
सोमवार	30 दिसंबर	सोमवती अमावस्या	शनिवार	25 जनवरी	षट्तिला एकादशी
शुक्रवार	10 जनवरी	पुत्रदा एकादशी	रविवार	26 जनवरी	गणतंत्र दिवस
रविवार	12 जनवरी	विवेकानंद जयंती/युवा दिवस	शनिवार	30 जनवरी	शहीद दिवस

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे। —*संपादक***

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विशिष्ट सामयिक चिंतन

भारतीय दृष्टिकोण में भावनाएँ

भावनाएँ एवं संवेदनाएँ मनुष्य के व्यक्तित्व का अभिन्न अंग हैं। जाने-अनजाने, जीवन की प्रत्येक गतिविधि या तो भावनाओं से संचालित होती है या उनसे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है।

व्याख्यानों-उद्‌बोधनों का जो प्रभाव मनुष्य पर नहीं पड़ता, वो प्रभाव किसी भी बात के मनुष्य के मर्म को छू लेने पर पड़ जाता है। भावनात्मक स्तर पर छू गई बात, सकारात्मक हो तो जीवन को उन्नति के शिखर पर ले जाती है तो वहीं कोई नकारात्मक संवेग, मनुष्य को पाप-पतन के गर्त में धकेल देता है।

जीवन के प्रत्येक पहलू व व्यक्तित्व के सभी आयामों पर भावनाओं के जो प्रभाव हैं, उन्हें न तो नकारा जा सकता है और न ही उन्हें अनदेखा करके किसी महत्त्वपूर्ण उल्लेखनीय प्रगति की आशा-अपेक्षा की जा सकती है। यही कारण है कि आज भावनाओं को समझने के लिए, उनके सभी पक्षों पर शोध करने के लिए मानवीय चिंतन के सभी पक्ष भरसक प्रयास करते नजर आते हैं।

चाहे वो मनोविज्ञान हो या मनोचिकित्सा, समाज विज्ञान हो या भौतिकी, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य हो या भौगोलिक परिवेश, हर विद्या के विशेषज्ञ अपने-अपने क्षेत्र में भावनाओं पर शोध करते नजर आते हैं। यहाँ यह ध्यान देने योग्य लक्ष्य है कि भावनाओं को अनुभव करना जितना सहज व सरल है, उन्हें परिभाषित करना उतना ही कठिन व जटिल।

एक अनपढ़ व्यक्ति भी अपनी व दूसरे की भावनाओं को महसूस कर सकता है, आज जन्म लिया नवजात शिशु भी भावनात्मक आदान-प्रदान को अनुभव करता है, पर उसके बाद भी भावनाओं को एक समग्र रूप में परिभाषित करना आज तक वैज्ञानिकों के लिए संभव नहीं हो पाया है; क्योंकि परिस्थितियों के अनुरूप भावनाओं की परिभाषाएँ बदल जाती हैं।

मसलन-भावनाओं को सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में जैसा पुकारा जाएगा, वह उनकी जैव वैज्ञानिक परिभाषा, विवेचन से पूर्णतया अलग होगा। इसके अतिरिक्त अनुभव की गुणवत्ता, संवेगों की तीव्रता के आधार पर भी भावनात्मक परिभाषाएँ भिन्न हो जाती हैं।

ऐसा नहीं है कि इस दिशा में वैज्ञानिक प्रयास न हुए हों, पर तमाम शोध-निष्कर्षों के आधार पर यही पाया गया कि मनुष्य की भावनात्मक परिपक्वता के लिए जितने भावों (Emotions) की आवश्यकता है, वे उन्हें परमात्मा नवजात शिशु में पहले से ही देकर भेजता है; इसलिए मात्र उन्हें ही बेहतर तरीके से समझने की आवश्यकता है। इन्हें मूलभूत भाव (Basic Emotions) कहते हैं, जो सभी मनुष्यों में एक समान पाए जाते हैं और जिन्हें प्रकट करने का तरीका भी लगभग सभी संस्कृति-सभ्यताओं में एक समान है।

इन मूलभूत भावों में से पहला भाव—खुशी या प्रसन्नता (Happiness) का है। चाहे किसी पीड़ा से मुक्ति हो या किसी सुखद समाचार को मिलने की अनुभूति, चाहे दूसरों से मिली प्रशंसा हो या इंद्रियों से मिलने वाला सुख—मनुष्य खुशी के भावों, प्रसन्नता के भावों को सभी वर्गों में समान रूप से अनुभव करता है।

यद्यपि प्रसन्नता सबसे महत्त्वपूर्ण भाव है, तथापि वर्तमान समय में सबसे कम वैज्ञानिक शोध

इसी पर हुए हैं। सन् 1967 से 1995 के मध्य, भावनाओं पर हुए प्रत्येक 25 शोधों में से मात्र एक इस विषय पर हुआ, जिसका संभावित कारण परिवेश में बढ़ता तनाव है—जो शोधों का मुख्य विषय रहा।

इसमें सबसे उल्लेखनीय तथ्य यह है कि प्रसन्नता के भाव को व्यक्त करने के लिए पश्चिम जगत् में मात्र एक ही शब्द या माध्यम रहा; जबकि भारत में, आर्ष चिंतकों ने सदा से दो तरह के सुखों की कल्पना की—इंद्रियसुख, जो राग-द्वेष की ओर ले जाते हैं व आत्मिक सुख, जो ब्रह्मानंद व समाधि की ओर ले जाते हैं।

समाधि वह अवस्था है, जब परमात्मा के अंश के रूप में उत्पन्न जीवात्मा, अपने मूल रूप को प्राप्त कर स्वानंद का अनुभव करता है। महर्षि पतंजलि, योगसूत्र के समाधिपाद—1/3 में इसी अवस्था का उल्लेख करते हुए कहते हैं—

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्॥

अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाने पर अर्थात जीवात्मा व परमात्मा का योग हो जाने पर, द्रष्टा की अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है।

इस संसार से परे जाकर, इंद्रियातीत होकर आनंद को अनुभव करने की सोच, मात्र भारतीय चिंतन में ही उपलब्ध है और इसीलिए पाश्चात्य चिंतन इस भाव पर समग्र शोध करने से वंचित रह गया है। वर्तमान समय की एक महती आवश्यकता इस आयाम पर भारतीय परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए नूतन शोध करने की है।

प्रसन्नता के विपरीत उठने वाला इसका भाव, दुःख या क्षोभ का है। पश्चिमी मनोवैज्ञानिकों ने इस भाव को तीव्रता के आधार पर समझने का प्रयास किया है। जैसे प्लचिक के सन् 1980 के शोध के अनुसार, दुःख की तीव्रतम अवस्था शोक व सबसे तीव्रता वाली अवस्था चिड़चिड़ाहट है।

इस विषय पर एकमन एवं फ्राइसन ने तथा बाद में रसेल ने गंभीर शोध किए, पर मात्र भारतीय चिंतन ऐसा था जिसने न केवल दुःख के कारणों पर गंभीरता से विमर्श किया, बल्कि उसकी तीव्रता को अनेक तलों पर परिभाषित भी किया।

भारतीय चिंतन में जहाँ भगवान बुद्ध जीवन को दुःख रूप बताते हैं तो वहीं भगवान कृष्ण, दुःखों के मूल में आसक्ति को स्थान देते हैं। गीता के अध्याय-2 में वे कहते हैं—

ध्यायतो विषयान्पुंसः, सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥

—2/62-63

अर्थात विषयों का चिंतन करने वाले मनुष्य की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है, जो कामना को जन्म देती है। कामना न पूरी होने पर क्रोध होता है, जो मूढ़ता को जन्म देता है। मूढ़ता स्मृति को भ्रष्ट करती है और वह विवेक का नाश करता है। विवेक नाश होने पर मनुष्य पतन के मार्ग पर बढ़ चलता है।

भारतीय चिंतन में मात्र दुःख के कारणों का इतना सुंदर विवेचन ही नहीं, वरन प्राच्य भारतीय रचनाकारों ने दुःख से उत्पन्न होने वाले शारीरिक लक्षणों को भी दो श्रेणियों में रखा—

(1) रुदन।

(2) क्रंदन।

रुदन पुनः तीन कारणों से हो सकता है यथा—कुढ़न/द्वेष, प्रसन्नता व शोक; जबकि क्रंदन के तीन कारण—विलाप, आक्रांदता तथा परिदेविता हैं। आज से 500 वर्ष पूर्व दिया गया यह वर्गीकरण आज भी वैज्ञानिकों के लिए कर पाना संभव नहीं हो पाया है। इसलिए इस दृष्टिकोण से एक नूतन शोध आज की एक गंभीर आवश्यकता प्रतीत होती है।

मूलभूत भावों में तीसरा भाव भय है। पाश्चात्य चिंतकों ने भय को एक शरीर के

अवचेतन में बसे रक्षात्मक प्रत्युत्तर (adaptive response) के रूप में परिभाषित किया है; जबकि भारतीय विचारकों ने मृत्यु के भय को सर्वोपरि भय बताया है। वेदांत दर्शन, इसके मूल में आत्मा का अपने उद्‌भव को भूल जाना व माया को सत्य मान लेना बताता है, जो कि भय का कारण बनता है।

भारतीय चिंतन के अनुसार जैसे सांसारिक व आध्यात्मिक सुख अलग हैं, वैसे ही सांसारिक डर तो मात्र भय है; जबकि आंतरिक भय, त्रास के नाम से पुकारा जाता है।

वैज्ञानिक मानवीय भावों में चौथे भाव के रूप में क्रोध (Anger) को लेते हैं और उसका मुख्य कारण तनाव व चिड़चिड़ापन बताते हैं। थायरस का सन् 1998 का शोध इसके कारणों में शारीरिक पीड़ा, अवसाद, नैतिक द्वंद्व इत्यादि को गिनता है, परंतु इसके बाद भी यह गीता में अभिव्यक्त क्रोध के कारणों की गहराई में उतरने में सक्षम नहीं हो पाता। फिर मात्र ऐसा भी नहीं है कि भारतीय दर्शन आसक्ति व अहंकार के इस निषेधात्मक भाव का मूल बताकर शांत हो जाता है, बल्कि भारतीय टीकाकारों ने क्रोध को भी तीन श्रेणियों में विभक्त किया है।

हिंसा की तरफ ले जाने वाला भावनात्मक संवेग क्रोध है तो अपनी असहमति व्यक्त करने वाला भाव—कोप तथा ऐसी ही असहमति अपने प्रिय स्वजन के प्रति व्यक्त करना रोष कहा गया है। इसीलिए प्राचीन व्यवस्था में रोष का निदान पारस्परिक भावनात्मक चर्चा से, कोप का निदान एकांत में जाकर आत्ममंथन करने से (कोप भवन में बैठकर) तथा क्रोध का निदान प्रायश्चित करने से बताया गया है।

पाँचवाँ मूलभूत भाव विस्मय (Surprise) को बताया गया है। वैज्ञानिक इसे मात्र एक औचक उत्पन्न होने वाली क्रिया मानते हैं तो वहीं भारतीय चिंतक इसे उत्सुकता से लेकर स्मृतिज्ञान होने तक की श्रेणी में परिभाषित करते हैं।

अंतिम भाव घृणा (Hate) का है; जो घृणात्मक दृश्य या विचार किसी भी कारण से उत्पन्न हो सकता है। सामान्य बोरियत से लेकर पूर्ण विमुखता तक एवं विद्रूपता से लेकर जुगुप्सा तक घृणा के अनेक तल हो सकते हैं।

इजार्ड व हेयनेस के सन् 1988 के शोध व यात्सुमोटो के सन् 1992 के शोध के अनुसार घृणा व तिरस्कार साथ-साथ पैदा होने वाले भाव हैं। वहीं भारतीय चिंतकों ने घृणा को कई आयामों में परिभाषित किया है। जहाँ किसी घृणित दृश्य, पदार्थ को देखकर मन में पैदा हुआ भाव जुगुप्सा का है तो वहीं शारीरिक संवेग, उद्वेग के नाम से जाना जाता है। संसार के प्रति घृणा—वैराग्य को जन्म दे सकती है तो स्वयं के कृत्यों के प्रति घृणा—क्षोभ को।

आज जब संपूर्ण भारतीय चिंतन को विदेशी प्रभाव पूर्ण रूप से अपने चंगुल में ले चुका है तो वहाँ यदि हम प्राच्य भारतीय चिंतन की वैज्ञानिकता व समग्रता को देखते हैं तो एक ओर गर्व की अनुभूति होती है वहीं दूसरी ओर ग्लानि की। गर्व इस बात का है कि हमारी विरासत कितनी गौरवशाली है तो ग्लानि इस बात की कि हम उस कार्य को आगे नहीं बढ़ा पा रहे हैं।

भावनात्मक आयाम, मानवीय व्यक्तित्व का महत्त्वपूर्ण आयाम है और आज जब ज्यादातर पश्चिमी वैज्ञानिक भावनाओं की एक परिभाषा पर सहमत नहीं हो पा रहे हैं तो वहीं आज से हजारों वर्ष पूर्व, भारतीय विद्वानों व विज्ञजनों ने भावों का इतना समग्र अध्ययन करके रख दिया था। आज के मनोवैज्ञानिकों को आगे आकर भारतीय दृष्टिकोण से भावों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता है। ❑

कभी निष्फल नहीं जाती गायत्री-उपासना

प्रयोगशाला उस कार्यस्थली को कहते हैं, जहाँ किसी वस्तु के निर्माण व उत्पादन को लेकर विविध प्रकार के प्रयोग किए जाते हैं। किसी नई वस्तु के उत्पादन व आविष्कार को लेकर वैज्ञानिक दिन-रात तथा वर्षों तक श्रम करते हैं, पुरुषार्थ करते हैं, विविध प्रकार के प्रयोग करते हैं तब जाकर वे वांछित वस्तु का आविष्कार व उत्पादन करने में सफल होते हैं।

इस प्रकार के वैज्ञानिक प्रयोग और उसके सुपरिणाम हमें स्वास्थ्य, चिकित्सा, शिक्षा, संचार, रक्षा, गणित, खेल, मनोविज्ञान, कृषि, अंतरिक्ष आदि विभिन्न क्षेत्रों में देखने को मिलते हैं तो प्रयोगशाला एक वर्कशॉप है, जहाँ किसी भी वस्तु या उत्पाद को लेकर विभिन्न प्रकार के शोध व प्रयोग किए जाते हैं।

जैसे वैज्ञानिकों को वैज्ञानिक प्रयोग करने के लिए प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है, पहलवानों को पहलवानी के गुर सीखने के लिए अखाड़े व व्यायामशाला की आवश्यकता होती है, चिकित्सीय प्रयोग करने के लिए चिकित्सकों को चिकित्सीय प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है, अध्यापन के लिए अध्यापकों को पाठशालारूपी प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है, वैसे ही साधक को, उपासक को आत्मचेतना के विस्तार के लिए, भाव-संवेदना के विस्तार के लिए, आत्मा में परमात्मा को अनुभूत कर परमानंद, ब्रह्मानंद की प्राप्ति के लिए एक प्रयोगशाला, वर्कशॉप की आवश्यकता होती है, जिसे आध्यात्मिक उपासना कहते हैं।

आध्यात्मिक उपासना अनेक प्रकार की है, पर उनमें गायत्री-उपासना निस्संदेह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। भगवत्प्राप्ति, ब्रह्मानंद की प्राप्ति व अन्य आध्यात्मिक व भौतिक सुख-समृद्धि के लिए साधक को स्वयं के ऊपर गायत्री-उपासना के प्रयोग नियमित रूप से करने पड़ते हैं।

यह अपरिहार्य भी है और अनिवार्य भी; क्योंकि जैसे खेल के मैदान में उतरे और खेले बिना कोई खिलाड़ी नहीं बन सकता तथा बिना अखाड़े में उतरे कोई पहलवान नहीं हो सकता, वैसे ही उपासना किए बिना, उपासना के प्रयोग किए बिना कोई भी साधक, सिद्धि को प्राप्त नहीं हो सकता। चेतना के शिखर तक नहीं पहुँच सकता और शाश्वत सुख-शांति भी प्राप्त नहीं कर सकता।

स्वयं के साथ उपासनारूपी आध्यात्मिक प्रयोग करके असंख्य साधकों, उपासकों, संतों, योगियों ने अपनी आत्मचेतना को परमात्मचेतना के साथ एकीकृत करने में सफलता पाई है। उन्होंने स्वयं को तृप्त किया है और स्वयं को आध्यात्मिकता के उच्च क्षितिज में चमकते तारों, सितारों के रूप में स्थापित किया है।

यह पूरी तरह से स्वयं व्यक्ति के ऊपर निर्भर करता है कि वह स्वयं के साथ उपासनारूपी प्रयोग करने को तैयार है अथवा नहीं? वह क्या होना या बनना चाहता है? देवता या दानव, योगी या भोगी, सुखी या दुःखी? वह स्वयं के भीतर करुणा, प्रेम, संवेदना, सत्य आदि दैवी भावों को उपासना के द्वारा विकसित कर देवता बनकर स्वर्गीय सुख, शाश्वत सुख पाना चाहता है अथवा स्वयं में असत्य, अहिंसा, अनीति, अनैतिकता, अपवित्रता आदि तामसी भावों, विचारों को विकसित कर दानव बन क्षणिक भौतिक सुख पाकर सदैव दारुण दुःख और

अशांति पाना चाहता है? यह पूरी तरह से व्यक्ति के ऊपर ही निर्भर करता है।

यह आवश्यक है कि हम जैसा होना या बनना चाहते हैं, हमें वैसा ही जीवन जीना भी चाहिए। अपने व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए हमें अपने जीवन की प्रयोगशाला में तदनुरूप प्रयोग व पुरुषार्थ करने की आवश्यकता होती है। प्रायः लोग भगवान की प्रतिमा के पास बैठकर कुछ सामग्री अर्पित कर देने, कुछ मंत्रों का उच्चारण कर लेने और कामना-पूर्ति के लिए भगवान से मनुहार करने को ही उपासना मान लेते हैं।

ऐसी उपासना से मन बहलाव और मनोरंजन भले ही होता हो, पर इससे व्यक्ति का आंतरिक रूपांतरण नहीं हो सकता। आंतरिक रूपांतरण हेतु उपासना के मूलतत्त्व को समझना और तदनुरूप प्रयोग करना आवश्यक है।

उपासना के सही स्वरूप को स्पष्ट करते हुए परमपूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि उपासना के नाम पर प्रायः भूल यह होती है कि लोग यह समझ बैठते हैं कि भगवान को प्रसाद, नैवेद्य, नारियल, इलायची जैसी वस्तुएँ कभी मिलती नहीं और वे इन्हें पाएँगे तो फूलकर कुप्पा हो जाएँगे। कुछ स्तुति-पाठ सुनकर, जागीरदारों की तरह अपनी प्रशंसा सुनकर वे प्रसन्न हो जाएँगे और हमें मालामाल कर देंगे। इन्हीं खिलवाड़ों से भगवान को फुसलाया, बरगलाया जा सकता है और मनोकामना पूरी करने के लिए उन्हें लुभाया जा सकता है। भले ही वे उचित हों अथवा अनुचित, न्यायसंगत हों या अन्यायपूर्ण भगवान उन्हें पूरा करेंगे ही।

पूज्य गुरुदेव कहते हैं कि आम आदमी प्रायः इसी भ्रांति का शिकार है और इसे ही उपासना मान बैठा है। कुछ स्वर्ग, मुक्ति और सिद्धि की फिराक में रहते हैं। माला घुमाने और अगरबत्ती जलाने वालों में से अधिकतर संख्या ऐसे ही लोगों की है, पर वस्तुतः उपासना का अर्थ है—उपास्य के पास बैठना और उपास्य के गुणों को धारण करना।

वे अपना उदाहरण देते हुए कहते हैं कि हमें हमारे मार्गदर्शक ने आत्मोत्कर्ष हेतु सर्वप्रथम उपासना का तत्त्वदर्शन और स्वरूप समझाया और कहा कि भगवान तुम्हारी मरजी पर नहीं नाचेगा। तुम्हें ही भगवान का भक्त बनना और उसके संकेतों पर चलना पड़ेगा। ऐसा कर सकोगे तो तदनुरूप होने का लाभ प्राप्त करोगे।

पूज्यवर उपासना के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए पुनः कहते हैं कि ईंधन की हस्ती दो कौड़ी की होती है, पर जब वह अग्नि के साथ जुड़ जाता है, तो उसमें सारे गुण अग्नि के आ जाते हैं। आग ईंधन नहीं बनती, ईंधन को ही अग्नि में बैठकर, अग्नि के पास बैठकर आग बनना पड़ता है। भक्त को, उपासक को भगवान के संकेतों पर कठपुतली की तरह नाचना पड़ता है। भक्त को आत्मसमर्पण करना पड़ता है। बूँद को समुद्र में घुलना पड़ता है, समुद्र बूँद नहीं बनता। यही है उपासना का तत्त्वदर्शन। जो भगवान के समीप बैठना चाहे, वह उसी का निर्देशन-अनुशासन स्वीकार करे और उसी का अनुयायी-सहयोगी बने। हमें ऐसा ही करना पड़ा है।

वहीं गायत्री-उपासना के प्रभाव व महत्त्व को लेकर परमपूज्य गुरुदेव 'गायत्री महाविज्ञान' में लिखते हैं कि सद्ज्ञान की उपासना का नाम ही गायत्री-उपासना है, गायत्री-साधना है। जो इस उपासना के उपासक हैं, जो इस साधना के साधक हैं, उन्हें आत्मिक-सांसारिक सुखों की कमी नहीं रहती, ऐसा हमारा सुनिश्चित विश्वास और दीर्घकालीन अनुभव है। हमारे परामर्श और पथ-प्रदर्शन में अब तक अनेक व्यक्तियों ने गायत्री-उपासना की है, उन्हें सांसारिक और आत्मिक जो आश्चर्यजनक लाभ हुए हैं, वे हमने अपनी आँखों से देखे हैं।

इसका कारण यह है कि गायत्री-उपासना से उन्हें दैवी वरदान के रूप में सद्बुद्धि प्राप्त होती है और उसके प्रकाश में उन सब दुर्बलताओं, उलझनों, कठिनाइयों का हल निकल आता है, जो मनुष्य को दीन-हीन, दरिद्र, चिंतातुर एवं कुमार्गगामी बनाता है।

गायत्री वेदमाता, देवमाता और विश्वमाता हैं, अस्तु गायत्री का पयपान सबके लिए समान रूप से उपयोगी है। गायत्री वेदमंत्र है। गायत्री मंत्रों में शिरोमणि है। गायत्री कामधेनु है। गायत्री-उपासना हर दृष्टि से प्रभावशाली एवं महत्त्वपूर्ण है, यह बहुत ही प्रभावकारी है। गायत्री-उपासना का नियमित प्रयोग जीवनभर चलते रहना चाहिए।

गायत्री-उपासना के अंतर्गत अंतरिक्ष में प्रातःकालीन उदीयमान भगवान सूर्य का ध्यान करना, उदीयमान सविता देव की स्वर्णिम रश्मियों से स्नान करने का भाव ध्यान करना और उस स्नान से शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा के पवित्र व प्रकाशित होने का भाव ध्यान करना समाहित हैं।

फिर अंतरिक्ष में उदीयमान सूर्य के मध्य अक्षर रूप में प्रकाशित महामंत्र गायत्री का दर्शन करना अथवा उदीयमान सूर्य के मध्य में सगुण, साकार रूप में प्रकट व प्रकाशित हो रही आद्यशक्ति गायत्री माता का दर्शन करना और फिर उस उदीयमान सूर्य को अपने हृदयरूपी गुफा में स्थित आत्मा में उदीयमान होने का भाव ध्यान करना व साथ-ही-साथ गायत्री महामंत्र का अर्थ चिंतन करते हुए मानसिक रूप से गायत्री मंत्र का जाप करना बड़ी ही प्रभावकारी उपासना है।

उदीयमान सविता देव का ध्यान करने व गायत्री मंत्र का जाप करने से साधक को ओजस्, तेजस् व वर्चस् की प्राप्ति होती है। यह उपासना नियमित रूप से, संयम व श्रद्धापूर्वक दीर्घकाल तक करते रहने से साधक, उपासक का चित्त निर्मल होता है और उसे विविध रूपों में आत्मसाक्षात्कार होता है। उसे भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है।

उपासना का लक्ष्य ही है—व्यक्तित्व का परिष्कार। गायत्री-उपासना से उपासक को श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है, उपासक की बुद्धि प्रखर व तेजस्वी होती है और आत्मा में परमात्मा का ज्ञान-प्रकाश फूट पड़ता है, जिससे उपासक को भौतिक जीवन में सुख, शांति, समृद्धि के साथ-साथ ब्रह्मसुख व भगवत्प्राप्ति के रूप में परम आध्यात्मिक लाभ की उपलब्धि होती है।

परमपूज्य गुरुदेव के अनुसार—उपासना का अभिप्राय है उपास्य के पास होना, उपास्य की सामीप्यता का अनुभव करना। उपास्य में तन्मय होने का अभिप्राय है—उच्चस्तरीय आदर्शों एवं सिद्धांतों में लीन हो जाना और उनके अनुरूप आचरण करना। उपासना द्वारा व्यक्ति निर्माण की यह मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया चलती रहती है, जिससे व्यक्ति को पूर्णता की प्राप्ति होती है।

गायत्री-उपासना की महत्ता के कारण ही पूर्व युगों में प्रायः ऋषि-महर्षि, गायत्री के आधार पर ही योग-साधना तथा तपश्चर्या करते थे। वसिष्ठ, याज्ञवल्क्य, अत्रि, विश्वामित्र, व्यास, शुकदेव, दधीचि, वाल्मीकि, च्यवन, लोमश, दुर्वासा, परशुराम, दत्तात्रेय, अगस्त्य, सनत्कुमार, कण्व, शौनक आदि ऋषियों के जीवन-वृतांतों से स्पष्ट है कि उनकी महान सफलताओं का मूल हेतु गायत्री ही थी।

आधुनिक युग में भी ऐसे अनेक महात्मा हुए हैं, जिन्होंने गायत्री का आश्रय लेकर अपने आत्मबल एवं ब्रह्मतेज को प्रकाशवान किया था। उनके इष्टदेव, आराध्य भिन्न भले ही रहे हों, पर वेदमाता गायत्री के प्रति सभी की अनन्य श्रद्धा थी। उन्होंने प्रारंभिक स्तनपान गायत्री महाशक्ति का ही किया था, जिससे वे असाधारण प्रतिभा, असाधारण आत्मबल, ब्रह्मबलसंपन्न महापुरुष बन सके।

शंकराचार्य, समर्थ गुरु रामदास, नरसी मेहता, दादू दयाल, संत ज्ञानेश्वर, स्वामी रामानंद, गोरखनाथ, हरिदास, तुलसीदास, रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ, श्रीअरविंद, महर्षि रमण आदि महात्माओं का विकास गायत्री महाशक्ति के आँचल में ही हुआ था।

गायत्री महामंत्र, गायत्री-उपासना की असाधारण महत्ता को लेकर श्री माधवाचार्य से जुड़ी एक रोचक कथा है कि श्री माधवाचार्य ने आरंभ में 13 वर्षों तक वृंदावन में रहकर गायत्री अनुष्ठान किए थे। जब उन्हें वर्षों तक की गई गायत्री-उपासना का कोई फल, प्रभाव अनुभव नहीं हुआ, तब वे निराश होकर काशी चले गए और एक अवधूत की सलाह से भैरव की तांत्रिक उपासना करने लगे।

कुछ दिन में भैरव प्रसन्न हुए और श्री माधवाचार्य के पीठ पीछे से कहने लगे—''वर माँग!'' माधवाचार्य ने उनसे कहा—''आप सामने आइए और मुझे दर्शन दीजिए।'' तब भैरव ने कहा—''मैं गायत्री-उपासक के सामने नहीं आ सकता। तुम्हारे द्वारा वर्षों तक की गई गायत्री-उपासना के कारण तुम्हारे चेहरे पर एक असाधारण तेज है, इसी कारण मैं तुम्हारे सामने नहीं आ सकता।''

इस बात से माधवाचार्य को बड़ा आश्चर्य हुआ; क्योंकि वे तो यह मान बैठे थे कि उन्हें गायत्री-उपासना से कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ और उनकी गायत्री-उपासना निष्फल हुई। माधवाचार्य ने कहा—''यदि आप गायत्री-उपासक के सम्मुख प्रकट नहीं हो सकते, तो मुझे वरदान क्या देंगे? कृपया अब आप केवल यह बता दीजिए कि मेरी अब तक गायत्री-साधना क्यों निष्फल हुई?''

भैरव ने उत्तर दिया—''तुम्हारी गायत्री-साधना, गायत्री-उपासना निष्फल नहीं गई, बल्कि तुम्हारे द्वारा अब तक की गई गायत्री-उपासना से उत्पन्न शक्ति तुम्हारे पूर्वजन्मों के पापों का नाश करने में लग गई। अब तुम्हारी आत्मा निष्पाप हो गई है, अब आगे की साधना करोगे तो वह सफल होगी और तुम उसके प्रभाव को प्रत्यक्ष अनुभव कर सकोगे।''

यह सुनकर माधवाचार्य फिर वृंदावन आए और पुनः गायत्री-साधना आरंभ कर दी। अंततः उन्हें गायत्री माता के दर्शन हुए और उन्हें पूर्ण सिद्धि प्राप्त हुई।

उपरोक्त कहानी से यह स्पष्ट होता है कि गायत्री-उपासना कभी निष्फल नहीं जाती। किसी भी अन्य मंत्र के जपकर्त्ता और दुर्गा, काली, लक्ष्मी, विष्णु, शिव, कृष्ण, राम आदि किसी भी आराध्य के आराधक अपने इष्ट मंत्र के साथ-साथ गायत्री-उपासना, गायत्री महामंत्र का जप प्रयोग स्वयं के ऊपर कर सकते हैं; क्योंकि गायत्री मंत्र सार्वभौम मंत्र है, अतः इसका प्रयोग सबके लिए सुलभ है।

इसके प्रयोग से हम स्वयं को पूर्ण बना सकते हैं, सुखी बना सकते हैं, प्रतिभाशाली बना सकते हैं, ओजस्वी, तेजस्वी और वर्चस्वी बना सकते हैं और भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन में सफल हो सकते हैं। हम स्वयं के ऊपर गायत्री-उपासना का प्रयोग करके तो देखें। ❑

अध्यात्म विद्या के शक्ति तंत्र को धारण करने के लिए परशुराम, भगीरथ जैसी आत्माओं की जरूरत पड़ती है। घटिया लोग कुंडलिनी जागरण से लेकर सिद्धि-सामर्थ्यों की उपलब्धि के स्वप्न भर देखते हैं। उन्हें धारण करने के लिए शंकर जैसी जटाएँ चाहिए, सो कोई अपनी सर्वतोमुखी पात्रता विकसित करता नहीं, मात्र तंत्र-मंत्र के छिटपुट कर्मकांडों से लंबे-चौड़े स्वप्न देखते हैं और उनके मनोरथ असफल बने रहते हैं। ***—परमपूज्य गुरुदेव***

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

ईश्वर के यहाँ देर है, अंधेर नहीं

आंध्रप्रदेश में दो व्यापारी थे। उन्होंने साझे में व्यापार करना आरंभ कर दिया। एक का नाम था कैलाश और दूसरे का रमेश—इन दोनों में बचपन से ही घनिष्ठता थी। विद्यार्थी जीवन में भी रही और वयस्क हो जाने पर, कार्यों में भी उसे बनाए रखने के लिए दोनों व्यापार की ओर अग्रसर हुए। उन्होंने छोटे-छोटे कार्यों से बड़े कार्य करना प्रारंभ किया। इनका व्यापार बड़े-बड़े शहरों में चलने लगा, जिसमें हजारों का मुनाफा होने लगा। एक बार इतना लाभ हुआ कि 40-40 हजार रुपये के चैक, कैश कराने को बंबई (मुंबई) जाना था।

रमेश ने कैलाश से कहा—"चलो भाई अब की बार बंबई चलें वहीं से चैक कैश कराके अन्य आवश्यक वस्तुएँ खरीद लाएँगे।" कैलाश का पिता तैयार हो गया। उसने दोनों को शुभ मुहूर्त में विदा किया। 80000 की धनराशि देखकर रमेश के मुँह में पानी भर आया, उसके हृदय में कुत्सित विचार भर गए, वह मन में सोचने लगा कि अच्छा हो कैलाश को मारकर पूरी रकम का मालिक बन जाऊँ। इतने बड़े शहर में कोई यह बात कानोंकान नहीं जान सकेगा? फिर मेरे समान कौन धनी हो सकता है? यह विचार आते ही, वह उसे मारने के उपाय सोचने लगा।

बंबई में पहुँचकर रमेश ने दुकान पर जाकर दो पान लगवाए। एक शुद्ध और एक विष मिश्रित। कार किराये की थी ही। रमेश ने स्वयं अच्छा पान खाया तथा कैलाश को विष का पान खिलाया। पान खाते ही उसकी जीभ ऐंठने लगी और बदन शिथिल पड़ने लगा। बेचारा बहुत घबराया पर घबराने से होता क्या है?

रमेश ने 500 रुपये कार वाले को देकर उसकी लाश समुद्र में फिंकवा दी और 80 हजार रुपये का चैक कैश कराके घर वापस आया। अपने पिता को कुछ बातें बता दीं ओर कल्पित शोक प्रकट किया।

कैलाश के यहाँ शोक-समाचार पहुँचाया गया कि आपका पुत्र मेरे पुत्र के साथ समुद्र पर नहाने गया था, परंतु दुर्भाग्यवश वह लहर में बहता चला गया और न मालूम कौन जंतु उसे खींच ले गया। इससे रमेश के हृदय पर सदमा बैठ गया तथा उसकी हालत खराब हो गई। आपके पास मैं उसका भाग 4000 रुपये भी भेज रहा हूँ, जिसके कारण ये लोग बंबई गए थे तथा साथ में संवेदना सहानुभूति प्रकट की। कैलाश के पिता को यह समाचार पाकर अपार शोक हुआ, परंतु रमेश की ईमानदारी के प्रति वह कृतज्ञ हुआ तथा उसे आशीर्वाद देने लगा।

समय बीतने पर रमेश के घर पुत्ररत्न का जन्म हुआ। बहुत खुशियाँ मनाई गईं। उसका नाम विजय रखा गया। बड़े लाड़-प्यार से लालन-पालन होने लगा। उसके ऊपर परिवार का प्रत्येक व्यक्ति प्राण निछावर करता था। उसकी प्रत्येक माँग को पूरा किया जाता। खिलाने के लिए नौकर लगे थे। टहलाने को, नहाने-धोने के लिए अलग धाय थी। उसकी ऐसी देख-रेख रखी जाती, जरा से कष्ट पर दौड़-धूप मच जाती। सयाना होने पर वह स्कूल में भरती कर दिया गया। उसका विद्यार्थी जीवन भी अच्छी तरह व्यतीत होने लगा।

वह खूब मन लगाकर पढ़ता था। उसे सिनेमा देखने का बड़ा शौक था। भगवत्कृपा से वह पढ़-लिखकर होशियार हो गया। एक दिन जब लगभग 16 वर्ष का हो गया, अचानक उसके सिर में दरद होने लगा। अनेकों चिकित्सकों को दिखाया, परंतु उसका मरज बढ़ता ही गया। दवा का कोई प्रभाव उसके सिरदरद पर न हुआ।

बड़े-बड़े डाक्टरों ने इनकार कर दिया। तब उन्होंने हवा बदलने हेतु स्विट्जरलैंड ले जाने की सलाह दी। इसकी हालत इतने दिन में अत्यंत गिर गई थी। रमेश विजय को लेकर स्विट्जरलैंड गया, परंतु वहाँ की हवा का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

उसकी हालत और भी चिंताजनक हो गई। उसकी हालत देखकर सबको तरस आने लगा। अंत में विजय ने कह दिया कि पिताजी आप मुझे अब अपने देश लौटा ले चलिए, मेरी ठीक होने की आशा नहीं है। यदि ठीक होना होगा तो वहीं ठीक हो जाऊँगा, वरना ईश्वरेच्छा।

पिता को यह सुनकर बड़ा दुःख हुआ, परंतु अपने लाड़ले पुत्र का आग्रह टाल भी नहीं सकता था। इससे वह उसको उसी हालत में अपने देश लौटा ले आया। घर पर भी चिकित्सा जारी रही, परंतु अब उसकी हालत एकदम गिर चुकी थी।

एक दिन शाम को विजय लेटा हुआ था। पिता सिरहाने और पैर की ओर माँ बैठी थी। दीपक का प्रकाश हो रहा था। उसी समय विजय को हँसी आ गई। उसकी हँसी देखकर पिता ने चकित होकर पूछा—"बेटा! इस समय तुम्हें हँसी क्यों आई ?" विजय बोला—"इसलिए कि आपने मुझे पहचाना नहीं।"

रमेश बोला—"कैसी बातें करते हो बेटा! तुम्हें तो मैं पहचानता हूँ। तू मेरा बेटा है।" विजय ने कहा—"अच्छी तरह पहचानो और फिर हँस दिया।" इस पर पिता को शक हुआ, उसने खूब अच्छी तरह से देखा, फिर अवाक् रह गया कि अरे! यह तो वही चेहरा है, जो कैलाश को विष खिलाने पर उसकी लाश का था। वही कान के पास का निशान दिखाई दिया। वह मन में बहुत घबराया।

तभी विजय ने कहना शुरू किया—"देखो, तुमने मेरे साथ विश्वासघात किया था। मैं वही कैलाश हूँ, जिसके 40000 रुपये में से 4000 रुपये मेरे पिता को दिए थे और शेष हजम कर गए। उन्हीं रुपयों को लेने के लिए मैंने तुम्हारे यहाँ जन्म लिया था।

"पालन-पोषण तथा बीमारी आदि में आपने जितना खरच किया, वह सब मेरा कर्ज अदा हो गया केवल 500 रुपये शेष रह गए हैं। वह मेरे मरने पर दाह-संस्कार में लगा देना। अब आपको मुझे बेटा कहना शोभा नहीं देता। बस, अब मैं जाता हूँ।"

जो सबल है, वही जीवन संग्राम में सदा सफल होता है और ऐसा व्यक्ति चिरयुवा बना रहता है।

इतना कहकर विजय शांत हो गया अर्थात चिर नींद में सो गया। रमेश पर उस घटना का काफी प्रभाव पड़ा। उसने पुत्रशोक को धैर्यपूर्वक सहा और क्रिया-कर्म करके, इस संसार से पूर्ण रूप से मोह तोड़ लिया। विरक्तभाव में स्थित हो गया। उसने जगत् की निस्सारता को जान लिया। वह अब प्रभुचिंतन में अपना जीवन व्यतीत करने लगा। उसके हृदय में यह बात भली भाँति घर कर गई कि ईश्वर के यहाँ देर है, लेकिन अंधेर नहीं है। मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रामचरितमानस में इसका स्पष्टीकरण बहुत ही सुंदर ढंग से किया है—

करम प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥

❑

तप

जो पाप-ताप को हर लेता है, चिंता-द्वेष का विनाश कर समत्व भाव में स्थापित करता है, वही तप कहलाता है। ऐसा तप जिन्होंने भी किया है, उनका बड़ा सौभाग्य रहा कि अपनी संचित ऊर्जा से वे महान कार्य करने में सफल हुए। तप ने जिनको भी जीवन दिया, सजल सौंदर्य से वे परिपूर्ण हुए। हममें मनुष्यता का स्वरूप ही तप से आता है, तप वह विशाल कुंजी है, जो हृदय के हिमालय से प्रादुर्भूत हो महान कल्याणकारी कहलाती है।

तप में एक अनादि शक्ति की धारा है, जो हर युग में, विशिष्ट परिस्थितियों में समयानुकूल प्रादुर्भूत हो उठती है। तप ही महामानव बनने की यात्रा है। अब इस तप को कैसे किया जाए? यह सोचने-समझने का विषय है। तप के लिए कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं कि आप कठोर व्रत एवं अनुशासन का पालन करें, परंतु फिर भी हृदय में समाहित भगवान के लिए तप करने का आशय ही है कि हम तप को उस कुंजी के रूप में लें, जिससे कि हमारा आत्मपरिष्कार होता है, चिंतन सुदृढ़ होता है एवं हमें जीवन में कल्याणकारी प्रयोजनों को अपनाने हेतु दिशा-विदिशा प्राप्त होती है।

तप से अनेकों महामानवों ने वे विशेषताएँ अर्जित कीं, जो कि जीवन में किसी भी दिशा में उनके लिए उपयोगी हों। तप वास्तव में सामर्थ्य विकसित करने की कला है। तप का एक आशय इंद्रियों की सद्जाग्रति से है तो दूसरा मन की विचलन को मारकर उसे उभयपक्षीय निर्माण की ओर प्रेरित करने से है। तप से जीवन प्रफुल्लित हो उठता है, सद्भावनाएँ जाग उठती हैं, चरित्र निर्मल होकर मनुष्य को उसके सौभाग्य का पथ प्रदान करता है। तप ही वास्तव में जीवन को अमरता एवं ऊँचाई प्राप्त कराने की कुंजी है।

अब बात आती है कि जिसने तप करना सीख लिया उसे ऐसे क्या प्रयोजन अपनाने चाहिए, जो कि उत्थानपरक हों। तप के लिए तो जीवन समर्पित कर दिया, अब बचा क्या? यही वह निर्धारण है, जो हमें समय रहते कर लेना चाहिए, तप से बड़ा कुछ भी नहीं, परंतु उस तप को दिशा मिले इसके लिए मनुष्य को स्वयं अपनी प्रतिभा के परिष्कार एवं उसके नियमन की कला आनी चाहिए।

अपने आत्मिक सौंदर्य को निखारने की कला ही तप है, इसलिए तप को इंद्रियों सहित अंत:करण का, विषय विकारों को जलाने से संबंधी एवं आत्मा को ऊँचा एवं महान बनने का अवसर देने को ही कहना चाहिए। ऐसा तप यदि हो जाएगा तो उसके परिणाम सुखद एवं अचंभित कर देने वाले निश्चित ही होंगे।

क्रियाओं का निर्धारण भाव से होता है, भाव परिष्कृत हो जाएँ तो मानव-मर्यादा को ऊँचे उठने एवं सेवा-प्रकल्पों में जा लगने में देरी नहीं लगती है। तप उस विशाल अंतरात्मा का जागरण है, जिससे कि पुण्य-प्रयोजन हेतु आवश्यक शक्ति एवं उत्साह प्राप्त हो सके।

तपस्वी ही मानवता के सच्चे संरक्षक हैं। जिन्होंने भी तप किया है, अपने व्यवहार को परिष्कृत कर उदात्त चिंतन लिए आगे बढ़े हैं, जीवन में वे ही सच्चे-सफल कहला पाए हैं। तप का अर्थ निरंतर उस सत्प्रयोजन के लिए आत्माहुति देना है, जो कि मनुष्य को चरित्र से महान एवं अंतरात्मा से सशक्त बनाए।

तप ही जीवन का मूल सूत्र है, यदि इसे समझ लिया जाए, व्यवहार-परिवर्तन किया जाए, स्वयं को उस साँचे में ढाला जाए जो कि उत्कृष्ट एवं अनुपम कहलाए तो ही तप का प्रयोजन सफल-सिद्ध होता है तथा तप इस जीवन को पूर्ण परिष्कृत करने की दिशा में बढ़ चलता है।

तप ही मनुष्यता का संबल है, उसके कल्याणकारी स्वरूप का द्योतक तथा उसके चिर-मूल्य का प्रतिनिधि है। जब हम ऐसा कहते हैं कि हमारा यह जीवन तप से ही संरक्षित हो सकता है तो उसका अर्थ है तप को इस रूप में लिया जाए कि वह निरंतर घटित होने वाली प्रक्रिया है।

तप तब तक चलता है, जब तक कि शरीर में रक्त की एक बूँद भी शेष है। वायु का वेग निरंतर हमें प्रेरित करता है कुछ करने के लिए, समर्पण की पराकाष्ठा पुकारती है कि इस समय हमें इस प्रकार का चिंतन एवं दायित्व-बोध रखना चाहिए। जब यह हो जाएगा तो अन्य किसी बात की भी चिंता करने की आवश्यकता नहीं रह जाएगी।

तपस्वी अंत:करण वाले व्यक्तित्व अपने लिए मार्ग स्वयं खोज निकालते हैं, आगे बढ़ते हैं एवं वह कर गुजरते हैं, जिसे आदर्श एवं अनुपम कहा जा सके। जिसने भी जीवन के वास्तविक मूल्य एवं उसकी चिरसंपदा का अवगाहन किया है, मन में ऊँचे उठने की उमंगों को जन्म दिया है तथा लोक-कल्याण का महत्तर दायित्व अपने कंधों पर लिया है—उसी ने यह समझा है कि तप कितना महान गुण है।

इसमें प्रत्येक क्षण अपने अंत:करण को तपाना पड़ता है, सोने जैसा बना उसे पवित्र उद्देश्यों की खातिर समर्पित करना पड़ता है। यही तप का वास्तविक महत्त्व है एवं उसका मूल्य भी। आज समाज से तपस्वी वीरान हो गए हैं, सोचने-समझने का तरीका द्विमुखी तथा चाल बेढंगी-सी हो गई है, हम वैसे तपस्वी नहीं रहे, जैसे हमारे पूर्वज थे।

उन्होंने तो जीवन लघु से विराट बनने में लगा दिया, प्रेरणा स्वयं से पाई तथा समाज को वे अपने अद्भुत अनुदान दे गए। ऐसा नहीं कि तब विशिष्ट परिस्थितियाँ थीं—आज भी तो वह सब विद्यमान है। क्या ज्ञान की कमी है, क्या बताने-सिखाने वाले नहीं रहे? क्या वह अवसर दोबारा नहीं आएगा, जब भारतभूमि ऋषियों से सुसज्जित एवं अपनी मूल प्रेरणा को पूरा करती दिख रही थी?

भारत ने जो अनेकों संत, महापुरुष तथा वीर क्रांतिकारी दिए, क्या वह स्वर्ग से उतर आए थे। क्या मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना करने हमें परमुखापेक्षी होना पड़ेगा। कब भारत अपनी संतानों में वह गौरव भर देगा, जिसे कि ऋषियों का पुण्य-प्रताप तथा अंतरंग की धड़कन कहा जा सके? कब भारत विदेशी संस्कृति के मूल्यों को यथोचित सम्मान, परंतु अपनी अस्मिता की रक्षा को सर्वोच्च स्थान देगा, जब महान परिवर्तन की अनुगूँज चारों ओर बहेगी, जब मानवता सदियों से अपने तिरस्कार को छोड़ अपनी दिव्यता को स्वीकारेगी? कब परमात्मा इस धरती पर पुन: विराजेंगे?

माया के अंधकार में जकड़े भारतीयों को जब गीता का ज्ञान और उपनिषदों का दिव्य संदेश प्राप्त होगा, जब चरित्र पहले आएगा और भौतिक लिप्साओं का प्रबंध बाद में। जब माँ भारती अपने सौभाग्य को सराहेगी, जब चारों ओर का वातावरण दुष्ट-दुराग्रहों एवं हीन-पतित मान्यताओं से उठ सकेगा, जब राष्ट्रीय स्वाभिमान भारत की मूल धरोहर को जग-जाहिर करेगा, तो ही भारत उठ खड़ा हो सकेगा एवं तब इसके प्रकाश से धरती का कोई कोना वंचित नहीं रह जाएगा।

यही मानवता का अभिनव राग तथा उसकी उद्दीप्त मनोभूमि का प्रतिचिह्न बनेगा। ऐसा भारत मात्र चरित्र से बन सकता है और किसी साधन से नहीं। इसलिए जिस तप का पूर्व पंक्तियों में उल्लेख

हुआ है, उसे इसी रूप में लिया जाए कि समय राष्ट्रीय स्वाभिमान के जागरण का है।

इसलिए भारत के सपूत तुम तपस्वी बनो, निरहंकारी तथा आत्मप्रेरणा से चालित कहलाओ। फिर देखो संसार कैसे तुम्हारी कीर्तिगाथा को स्वीकार करता है, कैसे अभिनव निर्माण की ओर तुम्हारे कदम बढ़ते हैं, कैसे तुम धरती को वह सुख-सौभाग्य प्रदान करते हो जो कि उसका नैसर्गिक अधिकार है।

अपनी मनोभूमि को तपस्वी बनाओ, सुख-चैन सब त्याग दो, देखो यह कितना महान कार्य तुम्हारे सामने पड़ा है।

ऐ! भारत के वीर सपूतो जाग जाओ, अपनी तंद्रा से एवं तुम्हारे अभिमान से। टूटती-बिखरती आशाओं के मध्य उड़ान भरो आसमान की। संपूर्ण विश्व का परिचय उस भारत से कराओ, जो महान हो, प्रकाशयुक्त हो और तप की ऊर्जा से अनुप्राणित हो। ❑

परिजनों से 'विनम्र अनुरोध'

'अखण्ड ज्योति' मात्र एक छपे कागजों का पुलिंदा नहीं है। यह एक विशेष उद्देश्य के साथ प्रकाशित एक ऐसा प्राण-प्रवाह है, जो हर माह लाखों व्यक्तियों के अंतस्तल को झकझोरता है एवं उनके जीवन को बदलता है। 1937-38 से प्रकाशित इस प्राण-प्रवाह ने अगणित पाठकों के जीवन को श्रेष्ठता की दिशा में मोड़ा एवं उनके जीवन में सुख-सौभाग्य का प्रवेश कराया है। यह सतत, हर पल एक गुरु का शिष्यों को मार्गदर्शन है।

परिजन-पाठक अपना वार्षिक चंदा 300/- रुपये भेजकर इस प्राण-प्रवाह से अविरल जुड़े रहें। आजीवन सदस्यता 20 वर्ष का शुल्क 6000/- रुपये होगा। विदेश में वार्षिक सदस्यता शुल्क 2800 रुपया प्रतिवर्ष है।

अखण्ड ज्योति पत्रिका आपकी बहुमुखी सेवा करती रहे, यह हमारा प्रयास रहेगा। यह दैवी संपदा को आप तक पहुँचाती है। यह एक आशावाद का आश्वासन लेकर आपके पास हर माह आती है। आप भी जुड़ें अखण्ड ज्योति के रचनात्मक प्रवाह से और अनेकों को जोड़कर पुण्य अर्जित करें। अधिक-से-अधिक ग्राहक बनाकर इस पत्रिका का प्रसाद जन-जन तक पहुँचाएँ।

दीर्घायु जीवन के सूत्र

विश्व में ऐसे क्षेत्र पाए गए हैं, जहाँ के लोग लंबी आयु जीते हैं। विश्व के विभिन्न कोनों में पाए जाने वाले ऐसे क्षेत्रों को ब्लू जोन की संज्ञा दी गई है। यहाँ के निवासियों में 90 वर्ष या इससे अधिक जीवन जीने की संभावना पाई गई है। यहाँ के निवासी हृदय रोग या कैंसर जैसे रोगों से बचे हुए रहते हैं तथा यहाँ 100 वर्ष से अधिक आयु तक जीने वालों की संख्या दूसरे क्षेत्रों की तुलना में पाँच गुना अधिक पाई गई है।

इनकी लंबी आयु के पीछे निहित रहस्यों को समझकर हम भी इनमें निहित सूत्रों को अपनाकर दीर्घायु का वरदान पा सकते हैं। ब्लू जोन की खोज सबसे पहले वर्ष, 2004 में डैन ब्यूटनर द्वारा हुई थी, जो नेशनल जियोग्राफिक के फैलो, पुरस्कार विजेता लेखक, पत्रकार एवं फिल्म निर्माता रहे हैं।

ब्लू जोन में इटली का सार्डिनिया, जापान का ओकिनावा द्वीप, कोस्टा रीका का निकोया प्रायद्वीप, यूनान का इकारिया, कैलिफोर्निया का लोमा लिंडा आदि क्षेत्र चिह्नित किए गए हैं। ये अपेक्षाकृत गरम, काफी छोटे, दूरदराज के तथा समुद्र के समीप के क्षेत्र हैं। इनकी दीर्घायु में कोई एक बड़ा तत्त्व नहीं, बल्कि छोटे-छोटे कई कारक मिलकर काम करते हैं। इनकी जीवनशैली में पाए गए कारक कुछ निम्न प्रकार से हैं।

यहाँ के लोग विभिन्न गतिविधियों में सक्रिय रहते हैं। ये जिम जाकर व्यायाम नहीं करते, बल्कि बागवानी, सैर, खाना पकाने और अन्य दैनिक कार्यों के माध्यम से इसे दैनिक जीवन में शामिल करते हैं।

इनके कुछ के घर के आँगन व पिछवाड़े में एक बगीचा रहता है, जिसमें प्रतिदिन पानी देने, फल-सब्जी तोड़ने तथा खरपतवार निकालने जैसे कार्य करने पड़ते हैं। कुछ पहाड़ी ढलानों पर खेतों में काम करते हुए, ऊपर-नीचे चढ़ते हुए, भेड़-बकरियों व मवेशियों को चराते हुए स्वाभाविक रूप से सक्रिय जीवन जीते हैं। घर की महिलाओं व बुजुर्गों को कमरे की सफाई, स्वयं भोजन तैयार करना, इस दौरान खड़े रहना, सीढ़ियाँ चढ़ना आदि क्रियाएँ स्वाभाविक रूप में सक्रिय रखती हैं।

ओकिनावा के लोग फर्श पर बैठकर या उकड़ू बैठकर अधिक समय बिताते हैं। फिर बार-बार फर्श से उठने-बैठने पर कसरत हो जाती है, जो पैरों को मजबूत करने में मदद करती है। साथ ही शरीर के लचीलापन तथा पीठ के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करती है। ऐसे में गिरने की संभावना कम रहती है। जबकि विश्व में 65 वर्ष से अधिक आयु में गिरने व चोट लगने से होने वाली मृत्यु की संख्या प्रमुख कारण रहती है।

सार्डिनियन ब्लू जोन के पुरुषों पर अध्ययन में पाया गया कि उनका लंबा जीवन कृषि, पशुपालन, पहाड़ों की ढलानों पर रहने तथा काम पर जाने के लिए लंबी दूरी पैदल चलने से जुड़ा हुआ था। निस्संदेह रूप में व्यायाम से कैंसर, हृदय रोग और आकस्मिक मृत्यु का खतरा कम हो जाता है।

एक शोध में तो यहाँ तक पाया गया है कि व्यायाम से 39% तक मृत्यु का जोखिम कम हो सकता है। प्राकृतिक आहार भी ब्लू जोन के लोगों की दीर्घायु का एक बड़ा कारक माना जाता है।

ब्लू जोन के निवासियों का 95% आहार पौधों पर आधारित रहता है और मांस-मछली आदि का उपयोग अत्यल्प मात्रा में ही करते हैं। अमेरिका में औसत 200 पाउंड प्रतिवर्ष मांस का

सेवन रहता है, जबकि ब्लू जोन में यह मात्र 20 पाउंड पाया गया है।

शोध से ज्ञात हुआ है कि मांस के परहेज से हृदय रोग, कैंसर व कई अन्य कारणों से होने वाली मृत्यु के जोखिम को काफी हद तक कम किया जा सकता है। ब्लू जोन पर हुए सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ है कि इनके आहार में अधिक भाग पौधे आधारित खाद्य पदार्थों से मिले जटिल कार्बोहाइड्रेट का रहता है; जिसमें मीठे आलू से लेकर स्क्वैश मुख्य रूप से शामिल पाए गए हैं।

ये अपने बगीचे में उगी हुई सब्जियाँ, बीन्स, फल खाते हैं। नट्स व साबुत मोटा अन्न इनके आहार का हिस्सा रहता है। ओकिनावा में टोफू मुख्य आहार रहता है, दिन में प्राय: दो बार सब्जियों व जड़ी-बूटियों को मिलाकर खाते हैं। रोजमेरी, धनिया, सौंफ, अजवायन जैसे मसाले इनके आहार का हिस्सा रहते हैं।

प्राकृतिक ढंग से प्राप्त व तैयार किया गया भोजन स्वादिष्ट तथा पौष्टिकता से भी भरपूर रहता है और सस्ता भी। पाया गया है कि एक कप बीन्स खाने से जीवन प्रत्याशा में 4 वर्ष की वृद्धि हो जाती है और ब्लू जोन के लोग अधिकांशत: भोजन स्वयं तैयार करते हैं। इससे भी उनका पर्याप्त व्यायाम हो जाता है।

ओकिनावा निवासियों के आहार का एक मुख्य सूत्र रहता है कि जब पेट 80% भर जाए, तो वे खाना बंद कर देते हैं। इस तरह का कैलोरी प्रतिबंध भी दीर्घायु में सहायक रहता है। बंदरों पर 25 वर्षों तक किए गए प्रयोगों से पता चला है कि सामान्य से 30% कम कैलोरी खाने वाले बंदरों की आयु काफी बढ़ गई थी।

ओकिनावा में इसे हारा हची बु कहते हैं, जिसमें वे भोजन बंद कर देते हैं, जब वे 80% पेट भरा अनुभव करते हैं। बहुत अधिक कैलोरी खाने से वजन बढ़ता है, जो दीर्घकालिक बीमारियों का कारण बनता है। ब्लू जोन भोजन योजना का एक महत्त्वपूर्ण अंग रहता है कि आप अपना सबसे छोटा भोजन देर दोपहर या शाम को खाएँ और फिर इसके बाद कुछ न खाएँ अर्थात रात को खाने से परहेज करें। साथ ही सचेत रूप से आहार लेना भी एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

आराम से बैठकर, स्वाद लेते हुए भोजन करें। खाते समय मोबाइल, टीवी आदि बंद रखें। पाया गया है कि तेजी से खाने की तुलना में धीरे-धीरे खाने से भूख भी कम लगती है और पेट के भरा होने का एहसास होता है। ब्लू जोन में रहने वाले लोग शराब का सेवन भी नहीं करते हैं। शराब को कई तरह के रोगों व मृत्यु का एक बड़ा कारक माना गया है।

ब्लू जोन में लोग मिल-जुलकर रहते हैं, एकदूसरे पर निर्भर रहते हैं। परिवार को पहला स्थान देते हैं, रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान से जुड़े रहते हैं। अपने धर्मस्थल में जाते हैं, त्योहारों को प्राथमिक स्थान देते हैं। वे अपनी रुचि के आधार पर समुदायों में भाग लेते हैं। सामूहिक परियोजना, खेल-कूद, लंबी पैदल यात्राओं में भाग लेते हैं। कुल मिलाकर एकदूसरे के साथ मिलकर समय बिताते हैं और उनका स्वस्थ- सामुदायिक जीवन रहता है। साथ ही ये प्रकृति की गोद में प्रदूषणमुक्त जलवायु में विचरण करते हैं। इससे उनकी आयु में औसतन 7 वर्ष की वृद्धि होती है।

कुछ ब्लू जोन में कॉफी की जगह दोपहर को 20 मिनट की झपकी लेते हैं। विशेषकर गरम इलाकों में, जहाँ बहुत गरमी पड़ती है, प्राय: लोग रात को भी देर तक जागते हैं। सामाजिक मेल-जोल करते हैं।

दोपहर को सभी लोग झपकी लेते हैं। वैज्ञानिक भी पुष्टि करते हैं कि 20 मिनट की झपकी एक घंटे की खोई हुई नींद की भरपाई कर सकती है और दिनभर चुस्त-दुरुस्त रखने में सहायता करती

है। एक स्वस्थ संस्कृति के साथ ब्लू जोन के लोग एक उद्देश्यपूर्ण जीवन जीते हैं। वे अपने शौक को पूरी संजीदगी से जीते हैं। इसलिए आशा-उत्साह से भरे रहते हैं। साथ ही ब्लू जोन के लोगों का जीवन महानगरों की भाग-दौड़ भरी आधुनिक जीवनशैली से बचा हुआ है।

जीवन यहाँ धीमी गति से आगे बढ़ता है। इनका दीर्घायु एवं स्वस्थ जीवन किसी एक तत्त्व का परिणाम नहीं, बल्कि कई सारे तत्त्व इसमें सक्रिय रहते हैं।

प्राकृतिक एवं पौष्टिक भोजन से लेकर अच्छी नींद, अच्छे दोस्त, सामुदायिक जीवन, भरपूर गतिविधियाँ, उद्देश्यपूर्ण जीवन जैसे तत्त्व इसमें काम करते हैं, जिन्हें अपनाकर हर कोई ब्लू जोन की तरह लंबी आयु से युक्त स्वस्थ जीवन का लाभ ले सकता है। ❑

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

यह सूचना गत 12 मास से निरंतर जा रही है, इसका उत्तर नहीं मिल रहा है। समझा जा सकता है कि या तो पाठकों की इसमें रुचि नहीं है अथवा अन्य कोई कारण है। अतः आगामी मास से पुराने आजीवन सदस्यों (जिनका संदेश नहीं आया है) की अखण्ड ज्योति भेजना बंद किया जा रहा है।

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो सदस्य रुपये 150 (सन् 1982) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 15 (सन् 1982) से बढ़कर रुपये 300 हो गया है—भविष्य में और बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 6000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। अखण्ड ज्योति का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20 वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/RTGS/NEFT से भेजी जा सकती है। राशि भेजने के लिए बैंकों का विवरण पत्रिका में पृष्ठ सं. 46 पर दिया गया है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 300/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने, अखण्ड ज्योति भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पता, फोन नंबर, ई-मेल का उल्लेख अवश्य करें।

आप सबको पत्र द्वारा सूचित किया जा चुका है, संभव है किसी कारणवश पत्र न मिला हो। अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

पर्व विशेष-गीता जयंती

निष्काम कर्म ही कर्मयोग है

इंग्लैंड के एक प्रसिद्ध चिकित्सक थे—लॉर्ड मोनिहन। वे चिकित्सकीय कार्य को बड़ी ही कुशलता और सफलतापूर्वक किया करते थे। वे सदैव प्रफुल्लित और प्रसन्न रहा करते थे। वे भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर भी कुशलतापूर्वक ऑपरेशन कर दिया करते थे।

एक बार उनसे एक पत्रकार ने पत्रकारवार्त्ता में पूछा—"डॉ. मोनिहन, किसी रोगी के ऑपरेशन के लिए किसी शांत-एकांत स्थान की आवश्यकता होती है, जहाँ एक चिकित्सक अच्छी प्रकार ऑपरेशन कर पाता है, पर आप भीड़-भाड़ वाले, शोर-शराबे से भरे हुए स्थानों पर भी इतनी सरलता से ऑपरेशन कैसे कर दिया करते हैं? आपकी इस एकाग्रता का क्या रहस्य है, जो आप व्यस्ततम स्थानों पर, इतनी भीड़ के मध्य भी, इतनी सरलता से जटिल-से-जटिल ऑपरेशन कर दिया करते हैं?"

लॉर्ड मोनिहन ने उत्तर दिया—"भीड़ कैसी? मैं जहाँ भी ऑपरेशन करता हूँ, वहाँ तो मैं और मेरा रोगी, सिर्फ दो ही लोग उपस्थित होते हैं। औरों पर तो मेरा ध्यान ही नहीं जाता। रही बात एकाग्रता की, तो मैं अपने को उस रोगी के स्थान पर देखता हूँ, जो इतनी भीड़-भाड़ वाले स्थान पर भी स्वयं को निश्चिंत होकर मुझे सौंप देता है और जब मैं उसको इतनी सहजता के साथ स्वयं को मुझे सौंपते देखता हूँ, तब मैं भी अपने को निश्चिंत होकर अपने भगवान को सौंप देता हूँ। बाकी का काम तो भगवान स्वयं कर देते हैं।"

सचमुच निर्भार होकर स्वयं को भगवान को सौंप देना और निष्काम भाव से अपना हरेक कर्म करना ही कर्मयोग है और ऐसा कर्मयोग ही जीवन में सुख, शांति, प्रसन्नता, प्रफुल्लता, सफलता के साथ-साथ, मोक्ष, मुक्ति, आत्मबोध, आत्मानंद का आधार बनता है।

लॉर्ड मोनिहन की कुशलता, सफलता, प्रफुल्लता का कारण मात्र उनकी चिकित्सकीय विशेषज्ञता नहीं हो सकती थी, वरन उनकी कुशलता, एकाग्रता, प्रफुल्लता का कारण उनकी निष्कामता थी। अपनी निष्कामता के कारण ही वे कार्य करते हुए स्वयं को भगवान के हाथों में सौंपकर निश्चित हो जाया करते थे।

वे स्वयं को भगवान के हाथों का एक यंत्र मात्र मानकर निष्काम भाव से ऑपरेशन करते थे, अपना कर्म करते थे, और अपने हर कर्म को भी, उसके परिणाम को भी भगवान को ही सौंप दिया करते थे, अर्पित कर देते थे। फलस्वरूप कर्म करते समय वह कर्म के अच्छे-बुरे परिणाम की चिंता से मुक्त रहते थे, इसलिए हर कर्म में उनकी गहरी एकाग्रता होती थी।

कर्म में एकाग्रता होने से वे अपने कर्म को कुशलता और सफलतापूर्वक संपन्न करते थे और यही उनकी प्रसन्नता और प्रफुल्लता का कारण भी था। सचमुच कर्म करते समय स्वयं को अकर्त्ता और भगवान को ही कर्त्ता मानना, स्वयं के साथ-साथ कर्म के परिणाम को भी भगवान को सौंप देना, यही निष्कामता है और यह निष्कामता ही

कर्मयोग है और यह कर्मयोग ही भौतिक और आध्यात्मिक सफलता का आधार है।

एक सामान्य व्यक्ति कर्म का अनुकूल परिणाम मिलने पर अर्थात सफलता पाने पर खुशी से फूला नहीं समाता और कर्म का प्रतिकूल परिणाम पाने पर रुदन करता है व हताश-निराश हो जाता है और सदैव दु:खी रहता है; वहीं निष्काम कर्म करने वाला कर्मयोगी, सुख-दु:ख, सफलता-असफलता, हर्ष-विषाद दोनों ही स्थिति में समान बुद्धि वाला अर्थात समभाव, समत्व की स्थिति में रहने वाला होता है और सदैव प्रफुल्लित रहता है।

फल और आसक्ति के साथ किया गया हर कर्म हमारे लिए कर्मबंधन पैदा करता है, हमें सुख और दु:खरूपी बंधन में बाँधता है। सुख भी बंधन होने के कारण दु:ख ही है, सुख के प्रति आसक्ति भी अंततः दु:ख का ही कारण होती है और दु:ख तो दु:ख है ही। इसलिए हमें सच्चा सुख, सुख और दु:ख दोनों से मुक्त हो जाने पर ही मिलता है।

कर्मयोग हमें सुख और दु:ख से मुक्त कर शाश्वत सुख, परम सुख प्रदान करता है; अस्तु फल और आसक्ति को त्यागकर स्वयं को तथा स्वयं के हरेक कर्म को भगवान को सौंपकर केवल भगवदर्थसमत्वबुद्धि से कर्म करने का नाम ही कर्मयोग है। यही निष्काम कर्मयोग है, यही समत्वयोग है।

गीता (4.18 से 4.23) के अनुसार जो मनुष्य कर्म में अकर्म देखता है और जो अकर्म में कर्म देखता है, वह मनुष्यों में बुद्धिमान है। जिसके संपूर्ण शास्त्रसम्मत कर्म अर्थात शुभकर्म, सत्कर्म, पुण्यकर्म बिना कामना के, बिना फल की चिंता के और बिना आसक्ति के होते हैं तथा जिसके समस्त कर्म ज्ञानरूपी अग्नि के द्वारा भस्म हो गए हैं, उस महापुरुष को ज्ञानीजन भी पंडित कहते हैं।

जो पुरुष समस्त कर्मों में और उनके फल में आसक्ति का सर्वथा त्याग करके संसार के आश्रय से रहित हो गया है और परमात्मा में नित्य तृप्त है, वह कर्मों में भली भाँति बर्तता हुआ भी वास्तव में कुछ भी नहीं करता।

ऐसा आशारहित पुरुष केवल शरीर-संबंधी कर्म करता हुआ भी पापों को नहीं प्राप्त होता। जो बिना इच्छा के अपने-आप प्राप्त हुए पदार्थ में सदा संतुष्ट रहता है, जिसमें ईर्ष्या का सर्वथा अभाव हो गया है, जो हर्ष-शोक आदि द्वंद्वों से सर्वथा परे हो गया है, अतीत हो गया है—ऐसा सिद्धि और असिद्धि में सम रहने वाला कर्मयोगी कर्म करता हुआ भी उनसे नहीं बँधता।

जिसकी आसक्ति सर्वथा नष्ट हो गई है, जो देहाभिमान और ममता से रहित हो गया है, जिसका चित्त निरंतर परमात्मा के ज्ञान में, ध्यान में स्थित रहता है—ऐसे मनुष्य के संपूर्ण कर्म भली भाँति विलीन हो जाते हैं। उसके हर कर्म, अकर्म होने के कारण कोई बंधन पैदा नहीं करते, इसलिए वह कर्मयोगी सदैव बंधनमुक्त होने के कारण आनंदित रहता है, प्रफुल्लित रहता है, मुक्त रहता है। जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधनों को भस्म कर देती है, वैसे ही परमात्म-ज्ञानरूपी अग्नि संपूर्ण कर्मों को भस्म कर देती है।

कर्मयोग हमें यह सिखाता है कि कर्म के लिए कर्म करो, आसक्तिरहित होकर कर्म करो। कर्मयोगी इसलिए कर्म करता है कि कर्म करना उसे अच्छा लगता है और इसके अतिरिक्त उसका कोई अन्य हेतु नहीं होता। कर्मयोगी कर्म का त्याग नहीं करता है, बल्कि वह केवल कर्मफल की चिंता, इच्छा अथवा आसक्ति का त्याग करता है और फलस्वरूप वह कर्मजनित दु:खों से मुक्त हो जाता है।

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

वह यह जानता है कि दु:ख का बंधन 'आसक्ति' की प्रतिक्रिया का ही फल हुआ करता है। मन का समत्व भाव ही योग है, जिसमें मनुष्य सुख-दु:ख, लाभ-हानि, जय-पराजय, संयोग-वियोग को समान भाव से चित्त में ग्रहण करता है। कर्म करते समय उस कर्म के परिणाम अथवा फल की चिंता, इच्छा, आसक्ति का त्याग कर कर्म करने से वह कर्म भी पूजा के समान हो जाता है, वह कर्म निष्काम हो जाता है।

निष्काम कर्म पवित्र कर्म है, इसलिए वह कर्म भगवान को समर्पित हो जाता है। संसार का कोई कार्य ब्रह्म से अलग नहीं है। इसलिए कार्य की प्रकृति कोई भी हो निष्काम होने से अर्थात पवित्र होने से वह कर्म भगवान को ही अर्पित, समर्पित होता जाता है। पुनर्जन्म का कारण भी वासनाओं या अतृप्त कामनाओं का संचय है।

कर्मयोगी कर्मफल के चक्कर में नहीं पड़ता, अत: उसके चित्त में वासनाओं का संचय भी नहीं होता। इस प्रकार कर्मयोगी पुनर्जन्म के बंधन से भी मुक्त हो जाता है। भगवान कृष्ण गीता (3.30) में अर्जुन को निष्काम कर्म अर्थात कर्मयोग का उपदेश करते हुए कहते हैं कि हे अर्जुन! तुम मुझ अंतर्यामी परमात्मा में लगे हुए चित्त द्वारा संपूर्ण कर्मों को मुझमें अर्पण करके आशारहित, ममतारहित और संतापरहित होकर युद्ध करो।

यदि हम भी गीता में भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा उपदेशित इस निष्काम कर्म के अनुसार अपने मन, बुद्धि, आत्मा को अंतर्यामी परमात्मा में लगाकर संपूर्ण कर्मों को परमात्मा को अर्पित करके आशारहित, ममतारहित, आसक्तिरहित और संताप रहित होकर कर्म करें, कर्त्तव्य करें तो हम भी सदैव आनंदित और प्रफुल्लित रहेंगे; क्योंकि निरंतर आसक्ति से रहित होकर, मन, बुद्धि, आत्मा को परमात्मा में लगाए रखकर कर्म करने से साधक अपने कर्त्तव्य कर्म को भी भली भाँति और कुशलतापूर्वक कर पाता है और वह कर्मयोग के द्वारा परमात्मा को भी प्राप्त हो जाता है। ❑

एक संत का एक शिष्य था। वह रोज उनसे प्रश्न करता कि गुरुदेव! मुझे कुछ ऐसा ज्ञान दें, जिसका उपयोग मैं जीवनभर कर सकूँ। उसके प्रतिदिन प्रश्न करने पर भी संत ने उसको कोई उत्तर नहीं दिया। आखिरकार एक दिन थककर वह संत से बोला—''गुरुदेव! आप मुझे कोई शिक्षा दे ही दीजिए या मुझे कहीं और जाने दीजिए।''

इस बार संत बोले—''अच्छा, तुझे जाना ही है तो नगर में सुवंत नामक व्यापारी रहता है, उसके पास जा। वह जो सिखाए, वह सीखकर आना।'' शिष्य बे-मन से उसके पास गया, रास्ते में सोचता रहा कि जो मैं इतने बड़े संत से नहीं सीख पाया, वो एक व्यापारी से कैसे सीख पाऊँगा ? पर गुरुआज्ञा मानकर वह व्यापारी के पास पहुँचा और तीन दिन में ही वापस लौट आया। वापस लौटकर वह संत से बोला—''गुरुदेव! आपने भी मुझे कहाँ भेज दिया। वह व्यापारी तो सुबह पाँच बजे से बरतन साफ करता है और रात दस बजे तक माँजता ही रहता है। ज्ञान की एक भी बात नहीं करता है।''

संत बोले—''बेटा! यही सीखने तो तुझे भेजा था। जैसे बरतन को रोज माँजने की आवश्यकता होती है, वैसे ही मन को नित्यप्रति साफ रखने की आवश्यकता है। यदि यह साफ रहेगा तो मन में ज्ञान स्वत: ही उतर आएगा।'' आत्मपरिष्कार ही आत्मज्ञान का एकमात्र माध्यम है।

कर्मयोग का मर्म

महर्षि अंगिरा के आश्रम में रहकर उनके कई शिष्य विद्याध्ययन कर रहे थे। महर्षि के संरक्षण व मार्गदर्शन में आध्यात्मिक जीवनशैली के साथ सभी शिष्य अपने भावी जीवन की मजबूत नींव रख रहे थे। सभी शिष्य प्रात: ब्राह्ममुहूर्त में उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर कुछ योगाभ्यास करते तत्पश्चात भगवद्ध्यान करते हुए महामंत्र गायत्री का जाप करते, अग्निहोत्र करते, शास्त्रों का स्वाध्याय करते, सात्त्विक आहार लेते व गोसेवा और गुरुसेवा करते।

इस प्रकार की आध्यात्मिक दिनचर्या के साथ ब्रह्मचर्य आश्रम को पूर्ण कर फिर गुरुआज्ञा से सभी शिष्य गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने हेतु गुरु आश्रम से विदा होते। महर्षि स्वयं अपने शिष्यों का तिलक कर उन्हें गृहस्थ आश्रम की सफलता हेतु उपदेश व आशीर्वाद देते। उसी क्रम में आज कई शिष्य आश्रम से विदा ले रहे थे। उन्हीं शिष्यों में एक गोपमाल भी था।

महर्षि अंगिरा ने शिष्य गोपमाल का भी तिलक किया और उसे विदा करते हुए कहा—"तात! मैं जानता हूँ कि तुम्हारे अंत:करण में मुक्ति की आकांक्षा प्रबल है, तो भी तुम जाओ और वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा के अनुसार गृहस्थ धर्म का अनुशीलन करो।"

गोपमाल बोला—"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है गुरुदेव! पर यह संसार तो बंधन है, वहाँ जाकर मुक्ति व भगवत्प्राप्ति जैसे जीवन के परम लक्ष्य को भूल गया तो?"

महर्षि बोले—"भूलोगे नहीं तात! यदि तुमने कर्म के फल में आसक्ति नहीं रखी, तो तुम संसार में रहते हुए भी संसार के बंधन में नहीं बँध सकोगे। तुम संसार बंधन से मुक्त रहोगे और गृहस्थ आश्रम की जिम्मेदारियों व दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वाह करते हुए ही तुम स्वयं को जीवन के उसी परम लक्ष्य की ओर ही अग्रसर होता हुआ पाओगे, जिसके लिए तुम गृहस्थ का परित्याग करना चाहते हो।"

महर्षि की बातें सुनकर गोपमाल ने फिर कोई प्रतिवाद नहीं किया और वह वहाँ से अपने घर के लिए निकल पड़ा। श्रावस्ती के एक ग्रामीण की कन्या मालिनी के साथ विवाह कर गोपमाल सुख से जीवन बिताने लगा, पर समय के साथ-साथ गृहस्थ आश्रम में रहते हुए गोपमाल को गृहस्थ की जिम्मेदारियों, दायित्वों, समस्याओं व चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा।

गृहस्थ में रहते हुए उसे कभी खुशियाँ मिलतीं तो कभी दु:खों का पहाड़ भी सामने दिखाई पड़ता। कभी परिस्थितियाँ अपने अनुकूल होतीं तो कभी प्रतिकूल होतीं। कभी धन होता तो कभी धन का अभाव होता। एक बार धन के अभाव में गोपमाल को अपनी गायें भी बेचनी पड़ीं। इससे गोपमाल को बहुत दु:ख हुआ, पर जब गोपमाल को यह पता चला कि उसने धोखे से अपनी गायें किसी कसाई के हाथ बेच दी थीं और उन गायों का कत्ल भी हो गया है, तब गोपमाल का अंत:करण क्षुब्ध हो उठा।

अनजाने में हुए इस पाप के कारण उसका अंत:करण तीव्रता से छटपटाने लगा। अब उसने यह निश्चय किया कि वह गृहस्थी का परित्याग कर देगा।

उसने यह बात किसी को बताई नहीं, पर उसके व्यवहार में आए आकस्मिक परिवर्तन और तीव्र विरक्ति को देखकर उसकी पत्नी मालिनी समझ गई कि उसके पति गृहस्थ धर्म की जिम्मेदारियों व दायित्वों के प्रति क्यों उदासीन रहने लगे हैं। मालिनी ने भी मन-ही-मन यह निश्चय कर लिया कि यदि मेरे पति गृहत्याग करते हैं तो मैं भी गृहत्याग कर दूँगी।

अमावस की घोर अँधेरी रात थी। आस-पास की कोई वस्तु भी नहीं दिखाई पड़ती थी। बिस्तर पर सोया हुआ गोपमाल गृहस्थ जीवन की समस्याओं व चुनौतियों की चिंता में करवटें बदल रहा था। उसे नींद नहीं आ रही थी और तब उसने उसी समय गृहत्याग करने का निश्चय कर लिया।

गोपमाल अपने बिस्तर से चुपचाप उठा और जैसे ही कमरे से बाहर निकलने को हुआ कि तभी उसने देखा कि मालिनी उसके सम्मुख खड़ी है। ''मुझे मत रोको देवी!'' उसने आहत वाणी से कहा। ''रोकती नहीं आर्य! मैं तो स्वयं भी आपके साथ चलने को प्रस्तुत हूँ। आत्मकल्याण क्या पुरुष की ही आवश्यकता है, नारी की नहीं?''—मालिनी ने पूछा। ''हे भंते! घर से बाहर का जीवन कठिनाइयों से भरा होता है जिन्हें तुम सहन नहीं कर सकोगी।''—गोपमाल ने प्रतिवाद किया। ''आप कर सकते हैं तो मैं क्यों नहीं कर सकती प्राणनाथ!''—मालिनी ने कहा।

गोपमाल कुछ उत्तर दे पाता उससे पूर्व ही वहाँ एक आकृति प्रकट हुई। गोपमाल ने उन्हें पहचाना। ये तो मेरे गुरुदेव महर्षि अंगिरा खड़े हैं। उसने उन्हें प्रणाम किया। आशीर्वाद देते हुए महर्षि अंगिरा ने कहा—''तात! तुम दोनों आत्मकल्याण के इच्छुक हो, दोनों तितिक्षाएँ सहन करने के लिए तैयार हो, पर जो पारिवारिक और सामाजिक जीवन की विपरीत और कठिन परिस्थितियों से ही नहीं लड़ सकता, वह भला एकांत जीवन, आध्यात्मिक जीवन, साधनात्मक जीवन के संघर्ष से क्या मुकाबला करेगा?

''जिन प्रतिकूल परिस्थितियों से घबराकर तुम गृहस्थ से पलायन करना चाहते हो, यदि उससे और अधिक कठिन परिस्थितियाँ तुम्हारे एकांत जीवन में आ गईं तो तुम उनका सामना कैसे कर सकोगे? माना कि तुमने भूलवश अपनी गायें किसी कसाई के हाथों बेच दीं और उन गायों का कत्ल हो गया, पर क्या तुम्हारे पलायन कर जाने से समाज में ऐसे पाप होने बंद हो जाएँगे?''

महर्षि अंगिरा आगे बोले—''फिर क्या यह उचित न होगा कि तुम संसार में ही रहकर लोगों को पाप से बचाने और उन्हें सन्मार्ग पर लगाने का प्रयत्न करो। तात! तुम पलायन नहीं, पुरुषार्थ करो। तुम गृहस्थ जीवन के दायित्वों का पालन करते हुए अपने घर में ही यदि घोर तप करो, साधना करो, ध्यान करो तो तुम्हें अपने घर में भी मोक्ष, मुक्ति, भगवत्प्राप्ति जैसे परम लाभ उपलब्ध होंगे, इसमें कोई संशय नहीं, संदेह नहीं।'' ''लेकिन गुरुदेव! अनजाने में भी यदि मुझसे कोई पाप हो गया, कोई भूल हो गई तो उसके लिए उत्तरदायी कौन होगा देव?''—गोपमाल ने पूछा।

महर्षि अंगिरा ने उत्तर दिया—''यही समझने में तो निष्काम कर्मयोग का सारा मर्म छिपा है वत्स! मनुष्य कर्म करे, पर सफलता या विफलता, सुख या दु:ख, मान या अपमान सबमें अपने आप को स्थिर रखकर, समत्व में रखकर यदि फल से प्रभावित न हो तो संसार की बुराइयों का उत्तरदायी वह नहीं माना जा सकता है।

''इसलिए हे वत्स! तुम गृहस्थ में रहते हुए यदि मन, बुद्धि, आत्मा को सदैव परमात्मा में

लगाए रखकर अपना कर्म करो, गृहस्थ धर्म की जिम्मेदारियों का पालन करो तो तुम सुख-दुःख, पाप-पुण्य, शुभ-अशुभ सबसे मुक्त और परे हो सकोगे और भगवत्प्राप्ति कर सकोगे।''

महर्षि बोले—''आश्रम में जिस आध्यात्मिक जीवनचर्या का पालन तुम किया करते थे, उसी का पालन तुम अपने गृहस्थ जीवन में करो तो तुम्हारा गृहस्थ ही तपोवन बन जाएगा और उस तपोवन में ही तुम्हें भगवंत्प्राप्ति जैसे परम लाभ प्राप्त होंगे। तुम्हें तपस्या हेतु, मुक्ति हेतु, भगवत्प्राप्ति हेतु वन में जाने की आवश्यकता नहीं, वरन आवश्यकता अपने गृहस्थ जीवन को ही तपोवन बनाने की है, जिसमें रहकर तुम तप करो, ध्यान करो और निष्काम कर्म करो।''

महर्षि की बातें सुनकर गोपमाल को मानो सिद्धि मिल गई, कोई दुर्लभ वस्तु मिल गई। उस दिन से गोपमाल अपनी आध्यात्मिक दिनचर्या से अपने गृहस्थ को, घर को तपोवन बनाने में जुट गया।

उस दिन से वह कर्म से विरक्ति का विचार त्यागकर कर्म के फल में आसक्ति का त्यागकर निष्काम कर्म करने लगा। यही है गृहस्थ को तपोवन बनाने का मंत्र और यही है कर्मयोग का मर्म। ❑

एक व्यक्ति गुरु के पास गया और उनसे पूछने लगा—''गुरुदेव ईश्वरप्राप्ति में इतना विलंब क्यों होता है?''

गुरु बोले—''बेटा! तू मेरे साथ चल। मैं तुझे अभी समझाता हूँ।''

यह कहकर गुरु उसे तालाब के पास ले गए और उसे पानी में उतरने को बोला। उस व्यक्ति के पानी में उतरते ही गुरु उसका सिर पकड़कर उसे पानी में डुबोने लगे। ऐसा होते ही, वह व्यक्ति पानी से निकलकर भागा और गुरु को कोसने लगा।

गुरु बोले—''मेरे ऊपर क्रोध करना छोड़ और यह बता कि पानी में डूब रहा था तो किसलिए तड़प रहा था।''

वह व्यक्ति बोला—''आप डुबोते हैं और फिर ऐसे अजीब-से प्रश्न पूछते हैं। अरे मैं पानी में साँस लेने के लिए तड़प रहा था। बस, यह लग रहा था कि कहीं से जरा-सी हवा मिल जाए।''

गुरु बोले—''बेटा! जिस दिन तेरे मन में इतनी तड़प भगवान के लिए भी होगी, उस दिन वो भी तुझसे मिलने दौड़े चले आएँगे, फिर उसमें कोई विलंब न होगा।''

ईश्वरप्राप्ति के लिए मन में ईश्वरमिलन की व्याकुलता जरूरी है।

बंधन नहीं, शक्ति है एकांत

जिसे हम अकेलापन कहते हैं, वह इस संसार का सबसे अभिन्न तत्त्व है। कोई भी व्यक्ति ले लीजिए, वह अपने आप में अकेला ही है। अकेला इस कारण है कि जिसने उसे बनाया है, उसने उसके भीतर एक ऐसा तत्त्व समाहित कर दिया है, जो उसे सदा एकाकी लक्ष्य की ओर समर्पित रखे।

हम अकेले इसलिए नहीं हैं कि हमें संसार में वह नहीं मिल रहा, जो हमें चाहिए या हमारी भीतरी कमी पूरी नहीं हो रही या किसी से हमें द्वेष है या हमें कोई ऐसा मिला नहीं, जिससे सच में अपने हृदय की बात कह सकें, बल्कि अकेलापन इसलिए है क्योंकि हमारी अंतरात्मा बेचैन है, महान बनने के लिए।

अकेलापन इस बात का सूचक है कि हम सभी में एक दैवी प्रकाश, एक अद्भुत विलक्षण प्रतिभा एवं एक सर्वसमर्थ सत्ता का निवास है। उसे ही ईश्वर कहते हैं। ईश्वर और कोई नहीं, बस हमारी ही अमूर्त संभावना का नाम है।

ईश्वर वह अनादि-अनंत तत्त्व है, जिसके द्वारा यह संपूर्ण जगत् आच्छादित है, ईश्वर ही इसका नियंता एवं सर्वपोषक है। उस ईश्वर की परिकल्पना को यदि यथार्थ रूप देना हो तो इतना ही समझना चाहिए कि ईश्वर हमसे करवाना क्या चाहता है। ईश्वर हमारे भीतर की दैवी प्रेरणा का नाम है, ईश्वर सर्वसंयुक्त, महान एवं इस जगत् के कारोबार में अद्वितीय रहने वाली चेतना का नाम है। हम उस ईश्वर को पहचानें, एवं उससे अपने जीवन को लाभान्वित करें। यही वास्तव में ईश्वर की सेवा है, उस ईश्वर को जिसने भी देखा है, उसने यही समझा कि ईश्वर अनेकता में एकता का नाम है।

ईश्वर वह सर्वव्यापी तत्त्व है, जिसने जगत् को आच्छादित कर रखा है एवं जो इस विश्व-वसुधा में प्रत्येक प्राणी की सुविधा का बराबर ध्यान रखता है। उस ईश्वर को जिसने प्राप्त कर लिया, उसके लिए अकेलापन रह ही कहाँ सकता है। जो व्यक्ति अपने को अकेला मानें वे पहले यह समझें कि ईश्वर ने उनको ऐसा बनाया है कि वे जीवन के तमाम घटनाक्रमों के मध्य उस उत्कृष्ट तत्त्व को याद रखें, जिसने सारे संसार को आच्छादित किया हुआ है।

अकेलापन हमारी आंतरिक दुर्बलता न बन सके एवं हमें अपने जीवन का बोध हो कि किस महान उद्देश्य के लिए हमें यह जीवन मिला है तथा इसका सदुपयोग किस विधा से किया जाना है। यही सुनिश्चित प्रगति का मार्ग है एवं इस पर चल कर मनुष्य का जीवन धन्य हो जाता है तथा वह अपनी आत्मा से प्रकाशवान कहलाता है।

अकेलापन ही डर एवं आसक्ति का इलाज है, कोई इसलिए अकेला नहीं कि उसे बंधु-बांधव नहीं मिल रहे या वह किसी अन्य चीज के लिए तड़पता है। अपने भीतर की शांति, मुक्ति एवं वर्चस्व का नाम ही अकेलापन है, भीतरी संग्राम में जो विजयी है, वही वास्तव में अकेला चल सकता है। अकेलापन अपनी अंतरात्मा की स्वीकृति है।

इस अकेलेपन को जिसने पहचाना, जो इसके महत्त्व से परिचित हो गया, जो यह समझ गया कि इससे बड़ी शक्ति इस संसार में नहीं—वही इसके अद्‌भुत परिणाम से लाभान्वित हो पाएगा, उसे ही चरित्र की महानता एवं बाह्य जीवन में हर प्रकार की सिद्धि-सफलता मिलती जाएगी। अकेलापन ही आदमी का वास्तविक अलंकरण है।

हम इस अकेलेपन को पहचानें एवं इसके सत्परिणाम से लाभान्वित हों, जब यह जीवंत एवं जाग्रत हो जाता है तो कितने ही मनुष्यों का जीवन प्रकाश से ओत-प्रोत एवं प्रचंड साहस से परिपूर्ण दिखाई पड़ता है।

अकेलापन ही सृष्टि-साम्राज्य में एकमात्र वह विचार बिंदु है, जिसके द्वारा अनेकों रहस्यों को खोला जा सकता है। अपने भीतर के दिव्य तत्त्वों को उजागर कर एक आदर्श एवं महान जीवन जिया जा सकता है। जिसने अपने अकेलेपन को पहचान लिया है, फिर चाहे वह किसी भी परिवेश में, किसी भी प्रकार रह रहा हो, उसकी आत्मा कभी सो नहीं सकती है, चित्त के दिव्य-संस्कार निरंतर उससे कुछ ऐसा करवाएँगे कि जीवन को धन्य बनाने का प्रकल्प पूरा हो सके।

हमारी आत्मसंपदा ही अत्यंत महान है, उसे जिसने स्वीकार कर लिया, उसके लिए अकेलापन एक बाधा न होकर परिपूर्ण विकास का अवसर बन बैठता है।

यदि हम सच में अपनी आत्मा के हितचिंतक हैं तो हमें यह समझना चाहिए कि अकेले रहकर मनुष्य अधूरा नहीं, बल्कि दूसरों से कुछ विशिष्ट ही होता है।

एकांत में रहकर अर्जित की हुई तप-ऊर्जा को अनेक सृजनात्मक कार्यों में लगाया जा सकता है, चित्त का अकेलापन एक बीमारी नहीं, बल्कि एक दिव्य औषधि है, जो हमें इस संसार से हमेशा-हमेशा के लिए छुड़ा दे, अपनी आत्मा में प्रतिष्ठित करे एवं आत्मकल्याण से विश्वमंगल की यात्रा पर ले चले। ❑

एक बार स्वामी रामकृष्ण परमहंस नागा गुरु तोतापुरी जी के साथ धर्म, अध्यात्म संबंधी चर्चा कर रहे थे। सरदियों की ठिठुरती हुई शाम थी। पास ही में एक धूनी जल रही थी। उसी समय बाग का माली वहाँ आ पहुँचा और उस आग से अपनी चिलम भरने लगा। तोतापुरी जी यह देखकर क्रोध से आगबबूला हो गए। उन्होंने उसे डाँटा भी और साथ ही दो-तीन तमाचे भी जड़ दिए। यह देखकर रामकृष्ण परमहंस को हँसी आ गई।

तोतापुरी जी बोले—''अरे, इस अस्पृश्य माली ने पवित्र साधना की राख को छूने की धृष्टता की और आप इसे डाँटने की जगह हँस रहे हैं।'' रामकृष्ण परमहंस बोले—''मैं तो यह सोचकर हँसा कि आप 'एकोब्रह्म द्वितीयोनास्ति' अर्थात इस संसार में ब्रह्म के अतिरिक्त दूसरा कुछ भी नहीं है, के पक्ष में बातें कर रहे थे और अभी आपने आग और नौकर को अलग-अलग मान लिया। क्या इन दोनों के अंदर एक ही ब्रह्म नहीं है, जो आपको दोनों के साथ अलग-अलग व्यवहार करने की आवश्यकता जान पड़ी? एक पवित्र और दूसरा अस्पृश्य लगने लगा।'' तोतापुरी को उनका कहा समझ आ गया।

सुखी एवं सफल जीवन

जीवन में आशा, उत्साह एवं जीवंतता का संचार ही जीवन का सार है। जिसने हलकी-फुलकी, हँसती-हँसाती व सरल-सहज जिंदगी जीनी सीख ली, समझो उसने जीवन जीने की कला सीख ली और वह जीवन का खिलाड़ी बन चला। समस्त धर्म, अध्यात्म एवं दर्शन का सार व्यक्ति को इसी अवस्था की ओर ले जाता है।

गीता का समत्व योग, कर्म कौशल का दर्शन इसी ओर इशारा करता है, जो व्यक्ति को विषादमुक्त समता-संतुलन एवं आनंद भरे सफल जीवन की ओर ले जाने का मार्गदर्शन करता है, जिसे एक सरल-सहज एवं अनुशासित जीवन के संग छोटी-छोटी खुशियों को बटोरते हुए अंजाम दिया जा सकता है।

आजकल वैज्ञानिक शोध भी प्रमाणित कर रहे हैं कि विविध गतिविधियों एवं क्रियाओं के साथ शरीर से विशिष्ट हॉर्मोन्स का स्राव होता है, जो जीवन में सुखद एहसासों व प्रसन्नता भरी मनःस्थिति पैदा करते हैं। इन्हें फीलगुड हॉर्मोन्स अर्थात खुशियों के हॉर्मोन्स कहा जा रहा है, जिनमें डोपामीन, सेरोटोनिन, ऑक्सिटोसिन, एंडोर्फिन आदि प्रमुख हैं।

इन हॉर्मोन्स को आहार, विहार, व्यायाम एवं ध्यान जैसे सामान्य जीवनशैली के परिवर्तन के साथ प्रभावित किया जा सकता है। डोपामीन मस्तिष्क के आधार में स्थित न्यूरॉन्स द्वारा तैयार किया जाता है। डोपामीन की भूमिका को सीखने, चलने, हृदय गति, गुरदे के कार्य, रक्त-कोशिकाओं की सक्रियता, नींद, दरद निवारण, मनोदशा तथा दुग्धस्राव (लेक्टेशन) आदि में देखा गया है। डोपामीन के न्यून स्राव को पार्किन्सन रोग का कारण माना जाता है।

साथ ही इसकी कमी मन को अवसाद की ओर ले जाती है। सोया, केला, कद्दू व सेम के बीज, अवाकाडो तथा दूध, दही व पनीर जैसे दुग्ध उत्पाद इसको बढ़ाने में सहायक रहते हैं। यह भी प्रमाणित हो चुका है कि ध्यान डोपामीन को सक्रिय करता है।

इसके साथ अपने पसंद का संगीत सुनने, पर्याप्त विश्राम करने, अपना पसंदीदा पौष्टिक आहार लेने तथा नित्य छोटे-छोटे कार्यों का समय पर निष्पादन डोपामीन के स्राव को तीव्र करता है, जिसके साथ जीवन सुखद एहसासों से ओत-प्रोत होता है।

सेरोटोनिन, ब्रेनस्टेम के मध्य क्षेत्र में उत्पन्न होता है। फिर यह मस्तिष्क के विभिन्न हिस्सों में क्रिया करते हुए हमारी स्मृति, पाचन, नींद, श्वास, शरीर के तापमान, तनाव प्रतिक्रिया, काम, भय आदि व्यवहार व क्रियाओं को प्रभावित करता है। जब आप प्रसन्न होते हैं तथा जगत् में सब कुछ अच्छा लगता है, तो यह सेरोटोनिन का प्रभाव माना जा सकता है। यह हॉर्मोन मनोभावों को बेहतर बनाने के लिए जिम्मेदार रहता है।

इसका न्यून स्तर अवसाद से जुड़ा पाया गया है, जिससे उबरने के लिए लोग प्रायः औषधियों का सहारा लेते हैं; जबकि इसे प्राकृतिक रूप में

बढ़ाया जा सकता है। साइकल चलाने से लेकर जिम में वेट ट्रेनिंग करने पर मस्तिष्क से सेरोटोनिन की मात्रा स्रावित होती है। सूर्य की रोशनी से भी इस पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सब्जियों, फल, दाल तथा अन्न के साथ भी इसमें वृद्धि होती है। नित्य कुछ देर पैदल चलने, खुली हवा व धूप में कुछ देर बैठने, कार्डियो व्यायाम करने तथा ध्यान के साथ सेरोटोनिन का स्तर बढ़ता है।

ऑक्सिटोसिन अन्य महत्त्वपूर्ण फीलगुड हॉर्मोन है, जिसका उत्पादन हाइपोथैलेमस में होता है तथा रक्त में इसको पिट्यूटरी ग्रंथि द्वारा स्रावित किया जाता है। इसका मुख्य कार्य शिशु जन्म को सुगम करना होता है, जिस कारण इसे लव हॉर्मोन भी कहा जाता है। शरीर में यह एक सकारात्मक एहसास को जगाता है। यह विश्रांति, विश्वास तथा मनोवैज्ञानिक स्थिरता को प्रभावित करता है तथा सामाजिक व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

शोध में पाया गया है कि तनाव व उद्विग्नता के साथ ऑक्सिटोसिन घटता है और व्यायाम तथा संगीत के साथ यह बढ़ता है। आत्मीय स्पर्श, मालिश, आलिंगन आदि से इसमें वृद्धि होती है। अपनों का संग सान्निध्य, उन्हें अपने हाथों भोजन पकाने-खिलाने, बड़े-बुजुर्गों से बातचीत करने तथा पालतू पशुओं के साथ खेलने से ऑक्सिटोसिन हॉर्मोन का स्राव होता है।

एंडोर्फिन अन्य हैप्पीनेस हॉर्मोन है, इसको शरीर का प्राकृतिक दरदनिवारक माना जाता है। दरद व तनाव होने पर यह हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी ग्रंथियों द्वारा स्रावित होता है तथा दरद से राहत देता है और साथ ही तंदुरुस्ती भरा सुखद एहसास देता है।

एंडोर्फिन का स्राव शरीर में तनाव होने पर होता है, जो व्यक्ति को तनाव व दरद से राहत दिलाने में सहायता करता है। इस हॉर्मोन के अभाव में व्यक्ति अधिक तनाव एवं उद्विग्नता अनुभव करता है। चॉकलेट, स्ट्रॉबेरी व मसालेदार आहार इसके स्राव में सहायक हो सकते हैं।

थोड़ा थकाने वाले व्यायाम, योगासन, स्वादिष्ट आहार, गहरी नींद, कुछ विनोद इसके स्राव में सहायक पाए गए हैं। व्यायाम, एक्यूपंक्चर, ध्यान, संगीत, हँसी तथा सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों से इसमें वृद्धि होती है।

इस तरह इन हॉर्मोन का संबंध व्यक्ति की जीवनशैली से है। अपने आहार-विहार, व्यवहार एवं विचार को सुव्यवस्थित कर हम जीवन को सुखद एहसासों से भर सकते हैं। अत: शारीरिक स्वास्थ्य के लिए नित्य व्यायाम, पौष्टिक आहार और पर्याप्त जल का सेवन करते रहें।

मानसिक स्वास्थ्य के लिए खूब पढ़ें, अपने ज्ञान का विस्तार करें। सकारात्मक विचारों से मस्तिष्क को भरा रखें। देशाटन करें तथा ध्यान के लिए कुछ समय दें। संबंधों में आपसी विश्वास रखें, कर्त्तव्य का पालन करते हुए संयम-सहिष्णुता का अभ्यास करें तथा भावनात्मक विषाक्तता से दूर रहें।

दैनिक जीवन में छोटे-छोटे कदमों को दृढ़तापूर्वक उठाते हुए, जीवनशैली में वांछित परिवर्तन करते हुए हम इन सुखद एहसासों के साथ जीवन को सफलता के नए मुकाम तक पहुँचा सकते हैं और अपने संकल्प के अनुरूप जीवन को रूपांतरित कर सकते हैं। इसके लिए प्रात: जल्दी उठें, जिसका अर्थ है कि आप दिनभर के महत्त्वपूर्ण कार्य कार्यक्षेत्र में जाने से पूर्व निपटा चुके होंगे और एक प्रभावी दिनचर्या का मजबूत आधार तैयार कर चुके होंगे।

रात को सोने से पहले अपने विचार लिखें और कल की योजना बनाएँ। इसका परिणाम यह होगा कि प्रातः उठते ही आप अपने कार्यक्षेत्र में मुस्तैदी से जुट सकेंगे अन्यथा अनिर्णय की स्थिति में व्यक्ति का अधिकांश समय ऊहापोह में ही बीत जाता है कि आज करना क्या है। सही दिशा की ओर बढ़ता जीवन फीलगुड हॉर्मोन्स को स्रावित करेगा और स्वस्थ-सुखी जीवन का सबल आधार तैयार करेगा।

इसी के साथ नित्य अपने कौशल को धार दें। एक सक्रिय जीवन जिएँ और आधा घंटा व्यायाम के लिए नित्य निकालें। कार्य को बोझ मानकर न करें, बल्कि इसे रोचक बनाएँ। कोल्हू के बैल की तरह नहीं, बल्कि प्रभावी कार्य करें, जिसमें विश्राम की भी उचित व्यवस्था हो। अपने किसी उत्पादक शौक पर भी कार्य कर सकते हैं।

सोने का एक स्वस्थ क्रम बनाएँ। समय पर सोएँ। गहरी नींद स्वस्थ-प्रसन्न जीवन का आधार है। इसके साथ प्रकृति की गोद में विचरण करें। इससे स्वस्थ संसर्ग मिलेगा और ब्रह्मांडीय ऊर्जा से जुड़ाव अनुभव करेंगे।

इतना करने भर से हैप्पीनेस हॉर्मोन्स के संग जीवन में नई आशा, उत्साह एवं प्रसन्नता का संचार होगा, जो पूरे परिवार, समाज एवं प्रभाव परिकर को सकारात्मक ऊर्जा से प्रेरित करेगा। ❑

एक राज्य में एक दानी राजा रहा करते थे। उनके महल में हर समय याचकों की भीड़ लगी रहती थी। एक बार एक संत उस राज्य में पधारे। उन्हें राजा की दानी प्रवृत्ति के विषय में पता चला तो वे राजा से मिलने पहुँचे।

राजा ने उनका यथोचित स्वागत-सत्कार किया और पूछा—"महात्मन्! मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ।"

संत बोले—"राजन्! आप दानवीर हैं, यह स्वयं एक धार्मिक गुण है, परंतु उसके साथ आप एक राजा भी हैं, इसलिए आपको राजधर्म भी याद दिलाने आया हूँ। आपसे बिना परिश्रम दान का धन पाकर आपकी प्रजा श्रम से विमुख होकर आलसी बन गई है और यों ही दान पा लेने से उनके जीवन में कोई सार्थक परिवर्तन भी नहीं आ रहा है। इससे अच्छा है कि आप उन्हें रोजगार के साधन उपलब्ध कराएँ।"

राजा को संत का कथन सही लगा और उन्होंने वही पथ अपना लिया।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel
Rishi Chintan

आंतरिक महासमर में हमें जीतना ही होगा

इस संसार के तापों से दु:खती आत्मा ईश्वर को खोजती है, पर जब उसे ईश्वर मिल जाते हैं तो वह पूर्ण निश्चिंत हुई, अपने पथ का अनुगमन करती है। बड़ी ही मार्मिक पीड़ा होती है जीव को, जब उसे निरंतर कष्टों एवं झंझावातों से गुजरना पड़ता है यह देखने के लिए कि इन सब में मेरे लिए क्या रखा है। मैं क्या हूँ?

इस प्रश्न का निराकरण जीवन के प्रत्येक क्षण में किया जाना है। जहाँ दिखे कि मजबूरी है, कुंठा है, अदूरदर्शिता है तो यह भी समझ लेना चाहिए कि ये मात्र उस अपूर्ण व्यक्तित्व के द्योतक हैं, जिसे समझने हेतु हमें यह मनुष्य का जन्म मिला हुआ है।

पूर्णता के प्रकाश में एकमात्र वही आत्मा नहा सकती है, जो यह स्वीकारे कि एक महान सत्ता का सतत आशीष हम सब पर है, उसकी कृपा से जीवन हेतु किसी भी संसाधन की कमी नहीं की गई। आप यह समझिए कि जिन गुणों से ईश्वर ने हमें सुसज्जित किया है, वे यदि अक्षरश: हमें ज्ञात हो जाएँ तो हमारे जीवन में अंधकार आ ही नहीं सकता है।

जो यह समझ गया कि भीतर के प्रकाश के अभाव में ही सारे बाह्य कुकृत्य एवं उनके परिणामस्वरूप दु:ख भोगने पड़ते हैं तथा आंतरिक महानता को जगाए बिना जीवन में कोई भी कहने लायक प्रगति नहीं की जाती, वो यह भी समझ जाता है कि जीवन मिला किसलिए है? पेट में बच्चा था तो उसे माँ के प्राणों से पोषण मिलता था, वह अपनी क्षुधापूर्ति गर्भ में उपलब्ध साजोसामान से करता था।

उसके बाद जन्म हुआ तो अनेकों प्रकार के क्रियाकृत्यों में उसकी ऊर्जा बँटी रहती है, यही उसकी पीड़ा का सार है कि वह अभी तक पूर्ण वस्तु तक नहीं पहुँचा है। अब आप समझिए कि प्राणी तो एक ही है, जिसने जन्म लिया है, जो मृत्यु को प्राप्त करेगा, जिसे साथी-बैरी सब मिले, जो तरह-तरह के पचड़ों में फँसा।

यह सब होते हुए भी एक उसका लक्ष्य था कि मैं अपने स्रोत से पुन: कब मिलूँ। उसकी यही कामना उसे लाखों मील दूर ले आई, फिर भी वह अब भी बेचैन है कि सही रास्ता मिले। यह क्या है? हमें अपने अंत:करण में झाँकना चाहिए कि जिस वस्तु की हमें तलाश है, वह परमात्मा ही है तथा उसकी समर्थता के आगे कोई भी सांसारिक भोग या पदार्थ बाधा नहीं डाल सकता है।

यही उसकी महिमा है, वो जो निराकार है, निरुद्विग्न है, निश्चिंत है, पीड़ा से रहित तथा हर प्रकार की परमुखापेक्षिता से परे, यही उसका स्वरूप है। ऐसे परमात्मा को जो धारण करेगा, वह अधूरा नहीं रह पाएगा, उसका जीवन सँवरेगा साथ में अन्यों को भी उसकी प्रगति से लाभ मिलेगा।

हमारी जीवन की अधिकांश समस्याएँ इसीलिए हैं; क्योंकि हम सत् वस्तु और असत् वस्तु के मध्य का भेद करना नहीं जानते। बुरा जगत् में व्यवहार नहीं है, बुरा अपनी ही वृत्तियों का गुलाम बन जाने में है।

जिसकी आंतरिक आस उस परमात्मा से जुड़ गई, जो उसके चिर-वैभव को पहचान गया, जिसे यह बोध हो गया कि हमारा जीवन उसी के अनुरूप विकसित एवं परावर्तित होना चाहिए, वह यह भी समझ लेगा कि वह परमात्मा हमसे चाहता क्या है।

वह चाहता कुछ नहीं, बस, जीव को उसके अंतिम पायदान तक पहुँचाना ही चाहता है, उसके बाद जीव की स्वेच्छा होती है कि वह संसार में किसी भी प्रकार का विचरण करे, अनेक झंझावातों के मध्य भी उसकी प्रकाश-किरण फूटा करती है तथा मनुष्य की तड़पन इसीलिए है कि वह यह समझे सके कि वह कभी अपूर्ण था ही नहीं और जो भी अपूर्णता है, वह संसार की दी हुई है।

जितने भी विकार हैं, वे इस संसार द्वारा आरोपित हैं, जीव तो अपनी स्वाभाविक स्थिति में मुक्त ही है। फिर भी उसे यह याद रखना चाहिए कि परमात्मा से साझेदारी सबसे बड़ी होती है और यदि यह निभ जाए तो और किसी के निभने या न निभने से कोई फरक नहीं पड़ता। यदि अपना अंत:करण पवित्र है तो वह प्रकाश की किरणें स्वयमेव प्रस्फुटित करेगा एवं तब उसका संसार से संबंध आसक्ति एवं अंधकार का नहीं, प्रेम एवं आह्लाद का विषय बन जाएगा।

अपनी अमरता को झूठे-व्यर्थ प्रयोजनों में मत गँवाइए, उससे अपने चरित्र को महान बनाइए और वह कर गुजरिए, जिसके लिए मनुष्य का जीवन मिला हुआ है।

संसाधन आपके पास हैं, जो भी सुविधा हो सकती थी वह दे दी गई, परंतु इस मार्ग पर तत्परतापूर्वक आपको ही बढ़ना है, आपको ही विवेक के संबल द्वारा अग्नि-परीक्षाओं से गुजरना है, आपको ही हृदय की महान ज्योति को उसका उच्च आकाश प्रदान करना है।

आप ऐसे बन जाइए कि फिर सोने का अवसर नहीं मिले, जिसे प्राप्त करना था उसे प्राप्त कर लीजिए और आगे बढ़ चलिए, अपने मार्ग पर आत्मा को उन्नति प्रदान करने के लिए जिसे अपनी आत्मिक-प्रगति का भान है, वही मनुष्य कहलाने के लायक है।

यही वह केंद्र-बिंदु है, जहाँ से अध्यात्म शुरू हुआ है एवं इसका अंत होता है जीवन के पूर्ण-विकसित स्वरूप में। यही अंतत: जीवन की मुक्ति है। ❑

संत अपने शिष्यों को समझा रहे थे—''योग्य व्यक्ति की प्रशंसा या आलोचना ही महत्त्वपूर्ण होती है, शेष की नहीं।''

शिष्य बोले—''ऐसा क्यों ?'' संत उन्हें समझाने के लिए एक बाग में ले गए। वहाँ बड़े सुंदर पुष्प लगे थे। संत ने वहाँ खड़े होकर एक बकरी को आवाज लगाई। बकरी के पास आने पर वे उससे बोले—''बकरी जी! जरा देखिए तो कितने सुंदर फूल लगे हुए हैं।'' बकरी ने संत की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया और सारे फूल चर गई।

संत बोले—''इसीलिए जीवन में सुझाव व आलोचना उन्हीं की स्वीकारनी चाहिए जो उसका महत्त्व जानते हों। बाकी तो इसी बकरी की तरह मौके का फायदा उठाने की सोचते हैं।'' उनका कहा शिष्यों की समझ में आ गया।

पतझड़ के मौसम की रंग-बिरंगी छटा

पतझड़ के मौसम का सभी को बेसब्री से इंतजार रहता है। गरमियों के समाप्त होते ही शरद ऋतु के रूप में इसका आगाज होता है। उत्तरी गोलार्द्ध में शरद ऋतु प्राय: 22 सितंबर को प्रारंभ होती है और 21 दिसंबर को समाप्त हो जाती है। यह दौर पतझड़ के रूप में कई रोचक तथ्यों एवं घटनाक्रमों को समाहित किए होता है, जिसमें प्रकृति की रंग-बिरंगी मनमोहक छटा दर्शनीय रहती है।

आधिकारिक रूप से पतझड़ का शुभारंभ शरद विषुव 22 या 23 सितंबर से माना जाता है, जब सूर्य सीधे पृथ्वी की भूमध्य रेखा पर चमकता है। विश्वभर में इस दिन को नाना रूपों में मनाया जाता है। इस दिन विश्वभर में दिन और रात की लंबाई लगभग एक समान होती है। शरद विषुव गरमियों के मौसम के आधिकारिक अंत का भी प्रतीक रहता है। दक्षिणी गोलार्द्ध में 19 मार्च से 20 मार्च के बीच शरद विषुव मनाया जाता है।

शरद ऋतु के प्रारंभ होते ही दिन छोटे व सूर्य रोशनी की मात्रा कम होने लगती है। रातें लंबी हो जाती हैं और ठंढी भी। दिन का तापमान भी गिरने लगता है। कम रोशनी व बढ़ती ठंढ के कारण वृक्षों की पत्तियों में रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं।

इनमें क्लोरोफिल का बनना बंद हो जाता है और पत्तियाँ लाल, नारंगी, पीले और भूरे रंगों में बदलने लगती हैं। ऐसे में घाटियों में गुलजार वृक्ष-वनस्पतियों से भरे जंगलों में रंगों की छटा छा जाती है। कुछ क्षेत्रों में तो पत्तियाँ इतनी चमकीली हो जाती हैं कि अंतरिक्ष तक से इनकी छटा दिखाई पड़ती है।

इस समय तक किसान अपनी फसल काट चुके होते हैं और अन्न, फल, सब्जियाँ व शाक आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इस दौर की मुख्य फसलें रहती हैं—कद्दू, सेब, अंगूर, संतरे, अनार, अखरोट, भुट्टा, चावल आदि। जंगलों में विभिन्न प्रकार के कंदमूल तथा मशरूम इस समय तैयार रहते हैं। शाहबलूत, बाँजफल, पाइनकोन और चिलगोजा जैसे जंगली फलों का यह अपना विशिष्ट समय रहता है।

विश्व के विभिन्न भागों में इस दौरान बहुत रोचक एवं आकर्षक दृश्य देखे जा सकते हैं। हिमालयन क्षेत्र के घरों में छतों पर छिलका उतरे मक्का तथा लाल-पीले व भूरे कद्दुओं की कतारें, चौलाई की फसल से सजे रंग-बिरंगे खेत दर्शनीय रहते हैं।

फलों के वृक्षों में सूखते रंगीन पत्ते सौंदर्य की अभिवृद्धि कर रहे होते हैं। अमेरिका व यूरोप के ग्रामीण परिवेश में इस दौरान लाल कद्दुओं की कतारें बिछी देखी जा सकती हैं।

इस समय गिलहरियाँ, गीदड़, उल्लू आदि जीव-जंतु सक्रिय दिखते हैं। कुछ पशु-पक्षी पेड़ की कोटरों में बीज और अन्य खाद्य पदार्थ छिपाते हैं, ताकि सरदी में आहार के रूप में उपयोग कर सकें।

गिलहरी इसके लिए प्रख्यात हैं, जो कोटरों में अखरोट, बाँजफल आदि को छिपाकर रखती हैं। हालाँकि वे इसका कितना उपयोग कर पाती हैं, यह बात दूसरी है।

कुछ जीव इस दौरान शीत निद्रा की तैयारी करते हैं, जैसे भालू। वह इस दौरान भारी आहार

लेकर, खूब घास व जड़ी-बूटियों को चरकर अपने शरीर में चरबी इकट्ठा करते हैं, जो शीतनिद्रा के दौरान इनके काम आती है, जब इनकी चयापचय प्रक्रिया अति धीमी हो जाती है और यह चरबी इनके ईंधन के काम आती है।

कुछ पक्षी एवं तितलियों की प्रजातियाँ इस दौरान गरम इलाकों की ओर लंबी परिव्रज्या पर निकल पड़ते हैं। पृथ्वी के कई क्षेत्रों में इस समय मध्य शरद ऋतु के दौरान टॉरिड उल्का की बौछार होती है।

ये छोटे धूल कणों से बनी होती हैं, जिनमें बड़ी मात्रा में कंकड़ के आकार का मलबा भी होता है। यह मलबा जब पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करता है, तो जलकर राख हो जाता है और शानदार आग के गोले बनाता है। विश्व के हर क्षेत्र से साफ आसमान में रात को इनके दृश्यों को देखा जा सकता है।

इस तरह विश्व के हर कोने में पतझड़ अपनी रंगत व रौनक लेकर आता है और सभी को पतझड़ के मनभावन मौसम का इंतजार रहता है। आश्चर्य नहीं कि इसे उत्सव के रूप में भी मनाया जाता है, जिसमें जापान का पतझड़ उत्सव विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

विदेश तक से पर्यटक इसके दिग्दर्शन करने के लिए आते हैं। इस दौरान यहाँ के पहाड़ और घाटियाँ नाटकीय रूप में रंग-बिरंगा परिधान ओढ़े होती हैं। इस समय सड़कों व पार्क में सूखी पत्तियाँ बिछी होती हैं। सूखी पत्तियों पर चहलकदमी और पत्तों के चरमराने की आवाज का लोग विशेष आनंद लेते हैं।

गिरे पत्तों से कलाकारिता इस समय की लोकप्रिय गतिविधियों में शुमार रहती है। कुल मिलाकर चारों ओर रंगों में झिलमिलाते दृश्य मन को मुग्ध करते हैं। शरद ऋतु के पत्तों को देखने के उत्सव को जापान में मोमिजी-गारी कहते हैं। इसमें विशेष परिधान में पर्वत घाटियों में विचरण किया जाता है।

घाटी व शिखर में बसे स्मारक, मंदिर व तीर्थस्थल सब सजे-धजे रहते हैं और रात की रोशनी में जगमगाते रहते हैं। पगडंडियों पर लाल-पीले पत्ते गिरने से सुनहले और लाल कालीन बिछे रहते हैं।

इस बीच नदियों में जल का स्तर कुछ कम होता है, जिसके मध्य लोग राफ्टिंग का आनंद लेते हैं। साथ ही कुछ गरम जल के झरनों में स्नान का लुत्फ उठाते हैं। इस दौरान विशेष खाद्य पदार्थों का भी लोग आनंद लेते हैं।

• •

आत्मा नदी संयम पुण्यतीर्था सत्योदका शीलतटा दयोर्मिः।

तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा॥

अर्थात हे पांडुपुत्र! आत्मा ही नदी है। संयम का ही दूसरा नाम तीर्थ है। सत्त्व पानी है, शील तट है और दयापूर्ण व्यवहार लहरें हैं। ऐसी आत्मनदी में स्नान करके पुण्यभागी बन। केवल तीर्थयात्रा से क्या लाभ? अंतरात्मा पानी से शुद्ध नहीं होती।

• •

जापान में तीन स्थान इस समय विशेष आकर्षण के केंद्र रहते हैं। क्योटो में अराशियामा, तोचिगी में निक्को और ओइता प्रांत में याबाकेई इस उत्सव के विशेष स्थल रहते हैं।

इसी तरह अमेरिका व यूरोप में हेलोवीन और थैंक्सगिविंग जैसे सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सव मनाए जाते हैं, जिसमें पकी फसल के लिए प्रकृति एवं ईश्वर को धन्यवाद ज्ञापित किया जाता है, सामाजिक संगति संभव हो पाती है और शीत ऋतु की तैयारी का भी यह संकेत रहता है। भारत में नवरात्र का संधिकाल इसी दौरान आता है, जिसे साधनात्मक अनुष्ठान के रूप में धूम-धाम से मनाया जाता है। ❑

ध्यान से होती है सुख की प्राप्ति

ज्ञान, ध्यान, भक्ति और वैराग्य के अभ्यास से कोई भी साधक परमपद और परमसुख प्राप्त कर सकता है, पर सत्य यह भी है कि ज्ञान, ध्यान, भक्ति और वैराग्य से विमुख अथवा विचलित होने पर हम संसार के मायाजाल में फँसकर नानाविध दु:खों के शिकार होते हैं और जीवन एवं मृत्यु के चक्र में फँसे रहकर जन्म-जन्म तक दु:ख-ही-दु:ख पाते हैं।

इस दु:ख से मुक्ति का एक ही उपाय है और वह है भगवत्प्राप्ति। भगवत्प्राप्ति से ही हमें शाश्वत सुख, ब्रह्म सुख, परम सुख की प्राप्ति होती है और हम सभी प्रकार के दु:खों से मुक्त हो जाते हैं, अस्तु हमें सदैव सावधान रहना चाहिए कि हम कभी भी ज्ञान, ध्यान, वैराग्य और भक्ति से विमुख न हों, विचलित न हों।

ज्ञान, ध्यान, भक्ति और वैराग्य के अभ्यास और प्रभाव से हम संसार में रहकर भी सांसारिक मायाजाल से मुक्त रह दैहिक, दैविक, भौतिक तापों से मुक्त हो सकते हैं और परिवार, समाज, राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारीपूर्वक पालन करते हुए अपने जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं अर्थात हम ज्ञान, ध्यान, भक्ति और वैराग्य के नित्य-निरंतर अभ्यास से परम सुख की प्राप्ति कर सकते हैं।

हम तब लौकिक जीवन में, भौतिक जीवन में भी सुखी रह सकते हैं और आध्यात्मिक सुख का मिलना तो सुनिश्चित है ही, अत: साधक हर दृष्टि से लाभ में ही होता है, पर यदि साधना के मार्ग पर चलते हुए हममें अपनी साधना का, ध्यान का, ज्ञान का, वैराग्य का, भक्ति का अहंकार उठने लगे, तब यह समझना चाहिए कि हमारी साधना सही दिशा में नहीं चल रही है।

जब साधक ध्यान, ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का सही माने में अभ्यास करता है, तब धीरे-धीरे उसकी आत्मा पर चढ़े हुए अज्ञान, अविद्या, माया, अहंकार के आवरण मिटते जाते हैं और उसे अपने वास्तविक स्वरूप अर्थात सत्-चित्-आनंदस्वरूप का बोध होता है। वैसे ही, जैसे बादलों का आवरण छँटते ही आकाश में सूर्य जगमगा उठता है और उससे पूरा आकाश भी जगमगा उठता है।

इस आत्मबोध में ही उसे परम सुख, ब्रह्म सुख की अनुभूति होती है। यह सुख विषयभोग, सांसारिक सुख साधनों से मिलने वाले सुख की भाँति क्षणभंगुर नहीं, बल्कि स्थायी होता है; क्योंकि यह सुख इंद्रियों से नहीं, आत्मा से निस्सृत होता है। यह सुख आत्मा से निस्सृत क्यों और कैसे होता है?

यह सुख आत्मा में सतत ब्रह्म का चिंतन, ब्रह्म का ध्यान करते रहने से ही निस्सृत होता है। चूँकि परमात्मा सत्-चित्-आनंदस्वरूप है और आत्मा उसी सत्-चित्-आनंदस्वरूप परमात्मा का अंश है इसलिए परमात्मा का सतत चिंतन, मनन, ध्यान करने से, भक्ति करने से, परमात्मा का 'सत्-चित्-आनंद' तत्त्व साधक की आत्मा में प्रकट होता है। परमात्मा सुख की राशि हैं, इसलिए वह परम सुख साधक की आत्मा से निस्सृत होता है।

परमात्मा ज्ञान की राशि हैं, अत: वह परम ज्ञान साधक की आत्मा में प्रकट होता है।

आत्मा में परमात्मज्ञान के प्रकट होते ही साधक को यह अनुभव होने लगता है कि मैं शरीर नहीं, बल्कि सच्चिदानंद परमात्मा का अंश आत्मा हूँ। शरीर के नाश होने पर भी मेरा नाश नहीं हो सकता; क्योंकि मैं अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन हूँ।

शरीर के मरने या मारे जाने से शरीर की मृत्यु होती है, मेरी नहीं। यह शरीर तो मेरी आत्मा का वस्त्र मात्र है। जैसे मैं पुराने वस्त्रों को त्यागता हूँ, वैसे ही यह आत्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त करती है। आत्मा में परमात्मज्ञान के प्रकट होते ही साधक संसार के किसी वस्तु, व्यक्ति के प्रति कोई आसक्ति नहीं रखता।

वह कर्म करता है, पर कामनारहित होकर। वह कर्म करता है, पर कर्त्तापन की भावना से सर्वथा मुक्त होकर। वह कर्म करता है, पर स्वयं को अकर्त्ता व भगवान को ही कर्त्ता मानकर। वह तो स्वयं को भगवान के हाथों की एक कठपुतली मात्र मानता है और उन्हीं के इशारे पर नाचता, गाता, सोता, जागता और बहुविध कर्त्तव्य कर्म करता है।

वह मान-अपमान, सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद आदि सबमें समान बुद्धिवाला होकर, अपने कर्त्तव्य कर्म करता जाता है, निष्काम कर्म करता जाता है। वह यह अनुभव करता है कि वह जो कुछ भी करता है या कर रहा है, वह भगवान का कर रहा है, भगवान के लिए कर रहा है। वह पुण्य और पाप, दोनों को त्यागकर उनसे परे हो जाता है।

वह सुख-दु:ख दोनों से परे हो जाता है। वह संपूर्ण कामनाओं को त्यागकर ममतारहित, अहंकाररहित और स्पृहारहित हुआ विचरता है और पल-पल वह परम सुख, ब्रह्म सुख, परम शांति में होता है, जीता है। गीता के अनुसार यह स्थिति वास्तव में आत्मबोध, आत्मज्ञान और ब्रह्म को प्राप्त हुए साधक की स्थिति है। यह स्थिति स्थितप्रज्ञ होने की स्थिति है।

ब्रह्म को प्राप्त होकर वह साधक, वह योगी कभी मोहित नहीं होता, कभी किसी वस्तु, व्यक्ति में आसक्त नहीं होता, कभी अशुभ, बुरे अथवा पापकर्मों में लिप्त नहीं होता। वह संसार में रहकर भी संसार से निर्लिप्त रहता है, जैसे जल में रहते हुए भी कमल जल से निर्लिप्त रहता है। वह सदैव अपनी आत्मा में ब्रह्म का ध्यान करता हुआ, ब्रह्म का अनुभव करता हुआ, ब्राह्मीस्थिति में स्थित होता है और ब्रह्मानंद को प्राप्त होता है। ❑

ग्रीस का राजा प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात से मिलने पहुँचा। उसने उनसे प्रश्न किया—"कृपया यह बताएँ कि संसार में इतनी असमानता है, हर जगह विसंगतियाँ-ही-विसंगतियाँ हैं, इनका निस्तारण कैसे हो सकता है।?" सुकरात ने उत्तर दिया—"राजन्! दुनिया भर की असमानता हटाने की आवश्यकता क्या है? यदि हम संसार के सारे पर्वत समतल कर दें तो पर्वतों पर रहने वाले प्राणी कहाँ रहेंगे और यदि संसार के सारे समुद्र और खाइयाँ पाट दी जाएँ तो मछलियाँ कहाँ रहेंगी? समुद्र व जल में रहने वाले अन्य प्राणी कहाँ रहेंगे? इसलिए यह सोचने के बजाय कि संसार की सारी असमानता हटा दी जाए, तुम अपने मन से इस भेदभाव को हटाने का प्रयत्न करो तो तुम्हें सारी विसंगतियों में भी समरसता दिखाई पड़ने लगेगी।" सुखी जीवन का यही मार्ग है।

अध्यात्म की प्रतिमूर्ति

गुरुदेव भारत के प्राचीन अध्यात्म तत्त्वदर्शन एवं अध्यात्म का मूर्तिमान प्रतिनिधित्व करते हुए अवतरित हुए। वे जानते थे कि वाणी और लेखनी के माध्यम से प्रचार और शिक्षण का कुछ असर तो होता है और उसकी आवश्यकता भी रहती है, पर उतने भर से काम नहीं चल सकता। प्रभावशाली शिक्षण वह होता है, जो मूर्तिमान हो। प्रत्यक्ष को देखे बिना प्रेरणा नहीं मिलती। विचार केवल हलचल उत्पन्न करते हैं। उन्हें कार्यान्वित कैसे किया जा सकता है, इसका उदाहरण जब तक सामने न आए तब तक श्रेष्ठता के सन्मार्ग पर चलने की किसी को स्फुरणा ही नहीं मिलती।

नमूना सामने है किसी समय में केवल सात ऋषि थे और वे समस्त संसार के सातों द्वीपों का एक-एक करके समग्र नेतृत्व सँभालते थे। कारण वे जो कहते थे, सो करते भी थे। वाणी से ही नहीं, क्रिया से भी वे जनता को दिखाते थे। जो बताना चाहते थे, कराना चाहते थे, उसे उन्होंने अपने मन, वचन और कर्म में अति गहराई तक समाविष्ट कर लिया था।

यह समन्वय ही उनकी प्रभावशीलता का मात्र आधार था। विद्या और प्रतिभा का भी मूल्य है, पर जहाँ तक जीवनक्रम बदल देने जैसे घोर कर्म को कराने की, व्यक्ति को पतन के गर्त से निकालकर उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचाने की आवश्यकता होती है, वहाँ बाँस के डंडे काम नहीं करते, वहाँ मजबूत क्रेनें ही काम करती हैं। प्राचीनकाल के आत्मवेत्ता अपने को इतना समर्थ और प्रभावशाली बनाते थे कि लोकनेतृत्व कर सकें।

इसके लिए वे बुद्धि या प्रतिभा को प्रखर करने में ही नहीं लगे रहते थे, वरन समग्र व्यक्तित्व को विचार एवं कर्म के समन्वय से प्रचंड बनाते थे। भारतीय तत्त्वज्ञान की विश्वव्यापी गौरव, गरिमा, प्रभावशीलता एवं सफलता का मूल कारण यह था कि वे अपने व्याख्यानों को अपने जीवन की प्रयोगशाला में सिद्ध करके दिखाते थे। आज वह क्रम टूटा तो वह दर्शन भी बैठ गया, जिसकी अब केवल चर्चा ही शेष रह गई है।

सामान्य स्तर की जनता के मन में तथाकथित अध्यात्मवादियों के और धर्म-धुरंधरों के आचरणों को देखकर अरुचि उत्पन्न हुई है। दंभ, छल, प्रपंच, भ्रांति और बहकावे के आधार पर कोई चीज देर तक खड़ी नहीं रहती, ढोल की पोल आखिर तो विदित हो ही जाती है। दूसरों को धर्म की शिक्षा और स्वयं के जीवन में शून्यता।

दूसरों को त्याग का उपदेश, स्वयं वैभव का संचय। इस विडंबना को जो भी देखता है, मन खट्टा करता है। ईश्वर की दुहाई दिन-रात देते रहने पर भी जिनके जीवन में कोई विशेषता न हुई उनका अनुगमन करके हमें क्या मिलने वाला है, उसमें भी संदेह उत्पन्न होता है।

मध्यमवर्गीय जनता का मन इन तथ्यों को जब देखता है, तब उसकी रुचि इस ओर से घटती है। उच्चस्तर के विचारशील लोग थोड़ी और गहराई से देखते हैं उन्हें इस दर्शन में या उसकी व्याख्या में कहीं कोई भारी त्रुटि दिखाई देती है। ऊँचे स्तर की विचार संपदा के संपर्क में आने से व्यक्तियों में

निखार आना चाहिए और प्रखरता उत्पन्न होनी चाहिए।

यह कैसा दर्शन जो अपूर्णता को दूर करने के लिए तत्परता उत्पन्न करने की अपेक्षा उससे समझौता कर ले। यथास्थिति से संतुष्ट रहने और परावलंबन को उचित मानने को जो तैयार हो जाए, वह कैसी उत्कृष्टता? ऐसी आध्यात्मिकता अपनाकर तो व्यक्ति पुनः कमजोर और गाफिल लोगों की पंक्ति में ही जा खड़ा होगा। भारत का पिछला इतिहास भी कुछ ऐसा ही है।

पिछले एक हजार वर्ष में यहाँ धर्म की ध्वजाएँ खूब उड़ाई गईं। जितने भी पंथ-संप्रदाय इस देश में उभरे हैं, वे सभी प्रायः इसी एक हजार वर्ष का उत्पादन हैं। सिद्ध महात्माओं की बाढ़ इन्हीं दिनों आई और देश पददलित भी इन्हीं दिनों हुआ। सोचा जाता है कि इन भक्ति-उत्पादनों की अपेक्षा यदि समर्थ गुरु रामदास, वंदा वैरागी, गुरु गोविंद सिंह जैसी प्रखरता को आंदोलित किया गया होता तो देश का अधिक हित साधन होता।

इस स्तर का चिंतन जब विचारशील वर्ग के मन में चलता है तो, वे इस प्रचलित धर्म-अध्यात्म की मान्यताओं को अवांछनीय और अनावश्यक मान लेते हैं और उन्हें कल्पनाओं का जंजाल मात्र समझकर उदासीनता धारण कर लेते हैं। इस प्रकार सामान्य और उच्च, दोनों ही स्तर के लोग जब महान तत्त्वज्ञान के प्रति उपेक्षा उपरति बरतने लगेंगे, अपने मन में उसका मूल्य गिरा लेंगे तो उससे भारी हानि होगी।

उच्च दर्शन की उपेक्षा करके कोई समाज अपनी उत्कृष्टता स्थिर नहीं रख सकता। उसके अभाव में तो उसे दुर्बल एवं पतित ही होना पड़ेगा। वर्तमान दार्शनिक अवसाद ने कुछ ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है, जिसका सुधार बिना एक क्षण गँवाए अविलंब आरंभ किया जाना चाहिए।

भारतीय तत्त्वदर्शन एवं अध्यात्म के सम्मुख प्रस्तुत इस जीवन-मरण जैसे अवरोध का विश्लेषण और निराकरण सही रूप से प्रस्तुत करने के लिए गुरुदेव ने न केवल कहा और लिखा, वरन उसे अपने कर्त्तव्य का अविच्छिन्न अंग भी बनाया। उन्होंने यह प्रतिपादन किया कि यति और योद्धा, दोनों का एक साथ रह सकना संभव है। संभव ही नहीं, स्वाभाविक भी है और आवश्यक भी।

दयालुता का अर्थ अनाचार का संरक्षण नहीं और क्षमा का अर्थ पाप और अनीति को स्वच्छंद रूप से कुहराम मचाते रहने की छूट देना नहीं है। रोगी पर दया की जानी चाहिए, पर रोग पर नहीं। पापी को भी प्यार किया जा सकता है, पर पाप के प्रति तो निष्ठुरता बरतनी ही पड़ेगी। संत की भी पूजा कसाई की भी पूजा। पुण्य की भी जय और पाप की भी जय। ऐसा समदर्शन तो व्यक्ति को दार्शनिक भूल-भुलैयों में उलझाकर संसार का सर्वनाश ही कर देगा। गुरुदेव ने अपने जीवन क्रम में उन तथ्यों को स्थान दिया, जिनमें उनके यति के साथ योद्धा तत्त्व भी पूरी तरह जुड़ा हुआ है। ❑

महोदधिरिवाहं स प्रपंचो वीचिसन्निभः।
इति ज्ञानं तथैतस्य न त्यागो न ग्रहो लयः॥ *—अष्टावक्र गीता*

अर्थात मैं समुद्र के समान हूँ। यह संसार तरंगों के जैसा है। इस कारण न तो इसे त्यागना है और न ही ग्रहण करना है। यह ज्ञान है अर्थात इस प्रकार का बोध ही ज्ञान कहलाता है।

भारतीय संस्कृति के निहितार्थ

भारतीय संस्कृति विश्व की एक विशिष्ट संस्कृति है, जो स्वयं में वे सारी विशेषताएँ समाहित किए हुए है, जो इसे विश्व में अद्वितीय बनाती हैं। इसके सार्वभौमिक, व्यावहारिक एवं कालजयी— शाश्वत चिंतन में आज के विश्व की तमाम वैयक्तिक, सामाजिक एवं वैश्विक समस्याओं के समाधान निहित हैं और इसीलिए सही माने में भारतीय संस्कृति विश्व संस्कृति है।

भारतीय संस्कृति को वैदिक संस्कृति भी कहा जाता है; क्योंकि इसके आदिस्रोत अपौरुषेय ग्रंथ वेद हैं तथा इसके मूल में मानव चेतना एवं सृष्टि के मर्मज्ञ ऋषियों का वैदिक दर्शन एवं चिंतन निहित है और ऋग्वेद को विश्व का सबसे पुरातन लिखित ग्रंथ होने का गौरव प्राप्त है। **सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा** के रूप में वैदिक ऋषियों का उद्घोष इसी पुरातनता की ओर इशारा करता है। इसकी पुरातनता के काल निर्धारण पर अभी भी शोध जारी हैं, लेकिन यह सभी संस्कृतियों की जननी है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

ऋषियों द्वारा इसके सूत्रों का प्रतिपादन करने के कारण यह ऋषि संस्कृति कहलाती है। इसका चिंतन एवं दर्शन शाश्वत सार्वभौम है, इस कारण यह सनातन संस्कृति के नाम से भी प्रख्यात है। मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत संस्कृति पूरी मानवता के हित की बात करती है, अत: यह मानव संस्कृति है। विदेशी आक्रांताओं के काल में इसे सिंधु नदी के इस पार फलता-फूलता पाया, तो अपभ्रंश रूप में इसे हिंदू संस्कृति कहा गया। मनुष्य की दैवी संभावनाओं को साकार करने में सक्षम इस संस्कृति को देव संस्कृति कहा गया।

दूसरी संस्कृतियाँ जहाँ लेने की बात करती हैं, हिंसा व प्रलोभन के बल पर दूसरों पर अधिकार, शासन व धर्मांतरण का प्रतिपादन करती हैं और उनके इतिहास के पन्ने आक्रमण, क्रूरता, लोभ एवं हिंसा से रक्तरंजित हैं तो वहीं भारतीय संस्कृति **आत्मवत् सर्वभूतेषु, वसुधैव कुटुम्बकम्** की बात करती है। सबको समाहित कर सबको साथ लेकर आगे बढ़ने की बात करती है।

हिंसा नहीं शांति, अधिकार नहीं सेवा, शोषण नहीं परोपकार, स्वार्थ नहीं त्याग एवं परमार्थ, अभिशाप नहीं वरदान इसके भाव-चिंतन में शीर्ष पर रहे हैं। देव संस्कृति सबके कल्याण की बात करती है। इनसान ही नहीं, पशु-पक्षियों, जीव-जंतुओं, प्रकृति के हर जड़-चेतन घटक की चिंता एवं चिंतन इसमें समाहित हैं।

व्यक्ति को संस्कारित कर उसे नर-पशु से महामानव, देवमानव बनाने वाली संस्कृति, देव संस्कृति ही है। आज समस्याओं के चक्रव्यूह में फँसी, विनाश के कगार पर खड़ी मानवता एवं अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही धरती को यदि कोई बचा सकता है, तो वह एकमात्र देव संस्कृति ही है।

व्यक्ति की सद्बुद्धि को जाग्रत कर उसे सन्मार्ग पर ले जाने का सूत्र इसके महामंत्र गायत्री में निहित है, जो सद्बुद्धि एवं आध्यात्मिक शक्ति की अधिष्ठात्री है। सबके लिए सद्बुद्धि की प्रार्थना व

सर्वव्यापी सूर्य-सविता देवता की आराधना इस मंत्र को सार्वभौम बनाती हैं।

गायत्री को देव संस्कृति की माता माना गया है। इसके साथ सत्कर्म, दान, त्याग एवं आत्म-उत्सर्ग के प्रतीक यज्ञ को देव संस्कृति का पिता माना गया है। **इदम् न मम** के भाव के साथ हर कार्य को परहित में अर्पित करने का भाव इसमें निहित है।

व्यक्ति सहित परिवार को संस्कारित करने, परिवार को नररत्न की खदान बनाने का सर्वांग दर्शन इसकी संस्कार परंपरा में निहित है। जन्म से लेकर मरण तक जीवन के विभिन्न अहम पड़ावों पर तथा इसके उपरांत भी लोक-लोकांतरों में जीवात्मा के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करना भारतीय संस्कृति में ही संभव है।

यहाँ व्यक्ति कभी मरता नहीं है, देह का त्याग करता है, अपनी अगली महायात्रा के लिए निकलता है और तब तक धरती पर जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है, जब तक वह पूर्णता को प्राप्त नहीं होता है। मोक्ष एवं पूर्णता की यह अवधारणा तथा इसका साधना-पथ मात्र भारतीय संस्कृति में ही निहित है, जहाँ जीव से शिव, नर से नारायण जनमानस के चिंतन का हिस्सा है।

व्यक्ति भगवान भी बन सकता है, उपनिषदों में ऋषियों द्वारा उद्घोषित इसके प्रतिपादक महावाक्य जन-जन के मानस में सदियों से गूँजते रहे हैं और पूरे विश्व के विचारकों, दार्शनिकों, मनीषियों को प्रेरित, प्रभावित, सम्मोहित एवं आह्लादित करते रहे हैं।

इसी कारण वाल्डेन झील के किनारे अमेरिका के आदर्श पुरुष हेनरी डेविड थोरो गीता के विश्व उत्पत्ति दर्शन का अवगाहन करते वाल्डेन झील के जल में गंगा की पावन उपस्थिति का एहसास करते हैं। सेंट पीटर्सबर्ग में जन्मे निकोलाइ रोरिक सत्य व शांति की खोज में हिमालय की गोद में निवास स्थल बनाकर भारतीय अध्यात्म में गहरी डुबकी लगाते हैं और अपनी कला व साहित्य को माध्यम बनाकर विश्वशांति के लिए आजीवन सृजन-साधना में जुटते हैं।

तमाम पश्चिमी विचारक, साहित्यकार अपने सृजन की प्रेरणा देव संस्कृति में निहित शाश्वत चिंतन में पाते हैं। भारतीय संस्कृति के वेद, उपनिषद्, गीता से लेकर पुराण, षड्दर्शन, स्मृति एवं महाकाव्य की दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं साहित्यिक धाराएँ पूरे विश्व को चमत्कृत करती हैं।

लोकमानस में पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होकर यह अपने कालजयी स्वरूप का ऐसा विरल उदाहरण प्रस्तुत करती हैं, जो अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। इसके साथ यहाँ के योग विज्ञान का सबसे सुव्यवस्थित, व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक प्रतिपादन पश्चिमी मनोवैज्ञानिकों के लिए शोध की नई अंतर्दृष्टि देता है।

यहाँ के धर्म विज्ञान, तंत्र एवं मंत्र विज्ञान, ज्योतिष एवं आयुर्विज्ञान तथा अन्य ज्ञान-विज्ञान की धाराएँ असीम संभावनाएँ लिए हुए हैं, जिन पर बहुत कुछ कार्य हो रहा है। यहाँ के पुरुषार्थ चतुष्टय की अवधारणा एवं आध्यात्मिक जीवन दर्शन बेजोड़ हैं, जो सांसारिक एवं इसके पार के पारलौकिक जीवन के बीच अद्भुत संतुलन साधते हुए व्यक्ति का समग्र मार्गदर्शन करते हैं।

इसकी वर्ण-व्यवस्था व्यक्ति को गुण के आधार पर श्रम के विभाजन का दर्शन प्रतिपादित करती है और इसकी आश्रम-व्यवस्था जीवन के विभिन्न पड़ावों को क्रमिक रूप से आगे बढ़ाती हुई उसकी पूर्णता की डगर तक ले जाती है। समाज के संस्कार

के लिए यहाँ के पर्व-त्योहारों एवं उत्सवों की परंपरा स्वयं में बेजोड़ है।

यहाँ की शासन-प्रशासन व्यवस्था अपने आदर्श रूप में प्रस्तुत होती है व शोध का विषय है कि किस तरह कभी वृहत्तर भारत की सीमाएँ विश्व के हर महाद्वीप में सात समंदर पार तक विस्तीर्ण रहीं। परमपूज्य गुरुदेव की पुस्तक 'समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान' में इसका प्रतिपादन अचंभित करता है।

निश्चित रूप में भारत का राष्ट्र चिंतन, जीवन मूल्यों की समझ एवं राष्ट्रीयता का बोध इसके मूल में रहा है, जो गंभीर शोध-अध्ययन एवं अनुशीलन का विषय है।

भारत की गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली स्वयं में अद्भुत रही है, जिसमें शिक्षा और विद्या का विलक्षण संगम-समन्वय रहता था और पूरे विश्व को विश्वविद्यालय की अवधारणा देने वाला देश भारत ही है।

नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय यहीं फले-फूले। आध्यात्मिक धुरी पर केंद्रित इस संस्कृति ने आत्मज्ञान व आत्मविजय को लौकिक ज्ञान तथा विश्वविजय से अधिक महत्त्व दिया।

ऋषियों-मनीषियों, संतों, दिव्य विभूतियों, साधु-ब्राह्मणों एवं अवतार परंपरा के देवमानवों की शृंखला ने इस संस्कृति को समय-समय पर जीवंत-जाग्रत रखा और आज प्राचीनकाल से मध्यकाल और वर्तमान युग तक, देश-काल एवं परिस्थिति के अनुरूप जीवन दर्शन एवं समाधान सूत्र देने के लिए प्रस्तुत रहे।

स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद, महर्षि रमण की आध्यात्मिक परंपरा में देव संस्कृति के युग-प्रवर्तक के रूप में परमपूज्य गुरुदेव का अवतरण होता है। उनका व्यक्तित्व, कर्तृत्व, जीवन दर्शन एवं संदेश 21वीं सदी के संविधान के रूप में युग समस्याओं के समाधान सूत्र उपलब्ध कराता है; जिसके आधार पर जीवन के हर क्षेत्र में व्यापक शोध-अध्ययन एवं अनुसंधान की महान संभावनाएँ विद्यमान हैं।

युगवेदना को धारण किए युग-मनीषियों एवं प्रबुद्ध शिष्य परिकर को इस हित आगे आकर युगानुकूल प्रतिपादन करने हैं और देव संस्कृति में निहित समाधान-सूत्र प्रस्तुत करने हैं। ❑

कर्माबाई भगवान पंढरनाथ की बड़े भाव से भक्ति किया करती थीं। हर सुबह वे उठकर भगवान के लिए खीर बनातीं और बिना स्नान किए ही भगवान को भोग लगा देतीं। एक दिन मंदिर के पुजारी उनसे बोले—"कर्माबाई! तू बिना नहाए भगवान को भोग क्यों लगाती है?" कर्माबाई बोली—"पंडित जी! भगवान सोकर उठेंगे तो उन्हें भूख लगेगी। इसलिए उठते ही पहला काम यही करती हूँ।"

पुजारी ने उन्हें समझाया—"यह काम नहा-धोकर किया करो।" अगले दिन कर्माबाई ने नहा-धोकर भोग लगाया, पर उस रात जब वे सो रही थीं तो उन्हें भगवान पंढरनाथ स्वप्न में दिखे और बोले—"माँ! आज पेट नहीं भरा।" कर्माबाई बोली—"पर प्रभु! मैंने खीर तो रखी थी।" यह सुन भगवान बोले—"हाँ, माँ! पर उसमें हर दिन वाली प्रेम-भावना नहीं थी।" कर्माबाई को समझ में आ गया कि भगवान भोग के नहीं, भाव के भूखे हैं और उन्होंने पूर्व की भाँति भोग लगाना प्रारंभ कर दिया।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—188

स्वास्थ्य पर्यटन पर शोध

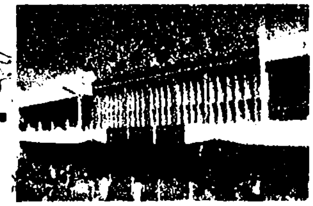

यात्रा और पर्यटन भारतीय संस्कृति की प्राचीन विरासत रहे हैं। यहाँ की भौगोलिक, प्राकृतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक विशेषताओं के कारण तीर्थाटन एवं पर्यटन की दृष्टि से भारत भूमि का अत्यंत विशिष्ट महत्त्व है। चूँकि आधुनिक समय में पर्यटन उद्योग समूचे विश्व में एक बड़ा व्यावसायिक क्षेत्र बनकर उभरा है—ऐसे में भारत भूमि पर भी इस क्षेत्र की अपार संभावनाएँ उभर कर सामने आ रही हैं।

विगत दो-तीन दशकों में भारतीय पर्यटन ने भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। यहाँ भी अब यात्रा और पर्यटन एक बड़ा उद्योग है। भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय द्वारा भी इस क्षेत्र में विकास और नवाचार से जुड़ी संभावनाओं को ध्यान में रखकर अनेकों योजनाओं एवं प्रोत्साहित करने वाली प्रक्रियाओं को संचालित किया जा रहा है।

निजी व्यवसाय के रूप में भी तेजी से लोग इस ओर उन्मुख हो रहे हैं। प्रारंभ में भारतीय पर्यटन का स्वरूप भले ही प्रमुखता से मनोरंजन, घूमना-फिरना और ज्ञान प्राप्ति आदि रहा हो अथवा धार्मिक यात्राओं से संबंध रहा हो, परंतु अब इसके स्वरूप में अनेक विशेष आयाम जुड़ चुके हैं।

वैश्विक स्तर पर लोगों में यात्रा-पर्यटन के प्रति बढ़ते अनुराग को ध्यान में रखते हुए इस क्षेत्र से जुड़े संस्थानों, नियामक इकाइयों और विशेषज्ञों ने पर्यटकों की आवश्यकता एवं रुचि के अनुसार पर्यटन के क्षेत्र में बखूबी नवाचार को अपनाया है, जिसके फलस्वरूप वर्तमान में इसके अनेकों नए आयाम विकसित होते देखे जा सकते हैं, जैसे—ग्रामीण पर्यटन, पाककला पर्यटन, पारिस्थितिकी पर्यटन, सांस्कृतिक पर्यटन, साहसिक पर्यटन, व्यावसायिक पर्यटन, अवकाश पर्यटन, वेलनेस (स्वास्थ्य) पर्यटन आदि।

उल्लेखनीय है कि पर्यटन के उक्त सभी आयामों पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में क्रमबद्ध रूप से शोध-अनुसंधान के कार्य संपन्न किए जा रहे हैं। ऐसे शोधकार्यों का उद्देश्य भारतीय पर्यटन-क्षेत्र की दृष्टि से इन नए विकसित आयामों का महत्त्व, उपयोगिता, चुनौतियाँ, संभावनाएँ, प्रयास आदि के संदर्भ में प्रामाणिक एवं तथ्यात्मक जानकारी को प्राप्त करना तथा समुचित दिशा-निर्देशन के पहलुओं को सामने लाना है।

शोधकार्यों की इसी शृंखला में विगत दिनों पर्यटन प्रबंधन विभाग के अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण शोधकार्य संपन्न किया गया है। यह शोधकार्य वर्ष—2019 में शोधार्थी कमल कुमार लसियाल द्वारा श्रद्धेय कुलाधिपति जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ. उमाकांत इंदौलिया के निर्देशन में पूर्ण किया गया है।

इस शोध-अध्ययन का विषय है—"**परसेप्शन ऑफ टूरिस्ट टुवर्ड वेलनेस सर्विसेस इन होटल्स-ए केस स्टडी ऑफ ऋषिकेश रीजन**" अर्थात होटल्स में वेलनेस सर्विसेस के लिए आने वाले पर्यटकों की क्या धारणा है। पर्यटकों की आवश्यकता, संतुष्टि और सेवाओं की गुणवत्ता आदि महत्त्वपूर्ण पहलुओं को आधार बनाकर यह शोधकार्य भारत में वेलनेस

पर्यटन के व्यापक स्वरूप को सामने लाने का प्रयास करता है।

वेलनेस पर्यटन में संपूर्ण स्वास्थ्य और जीवन के लिए कल्याणकारी पहलुओं का समावेश है। यह प्रमुख रूप से स्वास्थ्य पर्यटन से संबद्ध है तथा आरोग्य और जीवन की गुणवत्ता का प्रबंधन करना इसका मुख्य उद्देश्य है।

भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय ने उक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु बखूबी गाइडलाइन लागू की हैं। राज्य सरकारें, आयुष मंत्रालय के निर्देशन में नाभ (NABH) आदि वेलनेस पर्यटन के विकास एवं गुणवत्ता प्रबंधन की जिम्मेदारी को सुनिश्चित बनाने का कार्य करती हैं।

वैश्विक स्तर पर इस क्षेत्र की माँग को ध्यान में रखते हुए भारत के 20 से अधिक शहरों, स्थानों पर स्वास्थ्य पर्यटन की सुविधा से युक्त केंद्र संचालित हो रहे हैं। चूँकि भारत और भारत से बाहर के पर्यटकों में वेलनेस पर्यटन के प्रति तेजी से रुझान बढ़ रहा है और इनकी संख्या भी निरंतर बढ़ रही है।

ऐसे में पर्यटन उद्योग की जिम्मेदार संस्थाओं के लिए वेलनेस पर्यटन के वैश्विक स्तर के गुणवत्तापूर्ण विकास और ग्राहक सेवा एवं संतुष्टि के मापदंडों को पूरा करना चुनौती भी है और अपार संभावनाओं से युक्त अवसर भी। इस दिशा में यह शोध पर्याप्त जानकारी एवं महत्त्वपूर्ण दिशा निर्देशन प्रदान करने वाला अत्यंत उपयोगी प्रयास कहा जा सकता है।

शोधार्थी ने अपने इस शोध-अध्ययन के प्रयोग हेतु ऋषिकेश-क्षेत्र, उत्तराखंड के होटलों में आने वाले पर्यटकों में से आकस्मिक प्रतिचयन विधि द्वारा 260 पर्यटकों को अपने शोध प्रयोग हेतु चयनित किया। चयनितों से उपयोगी तथ्यों को एकत्र करने के लिए जिन शोध-उपकरणों को प्रयुक्त किया गया वे हैं—कार्निन व टेलर (1992) द्वारा निर्मित सर्वपर्फ स्केल तथा स्वीने एवं साउटर (2001) द्वारा निर्मित पेरवल स्केल।

इन दोनों का उपयोग सेवा, गुणवत्ता एवं सेवा मूल्य के मापन हेतु किया गया। इसके साथ ही प्रामाणिक तथ्यों को प्रकाशित शोध, सरकारी रिपोर्ट, समाचारपत्र, वेबसाइट आदि से भी प्राप्त किया गया।

प्रयोग एवं अन्य प्रामाणिक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर शोध परिणाम के रूप में यह पाया गया कि वेलनेस सेवा प्रदाताओं के प्रति पर्यटकों की धारणा उनकी संतुष्टि और भविष्य में इस सेवा को पुनः प्राप्त करने की इच्छा में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है।

शोध में यह स्पष्ट परिणाम प्राप्त हुआ कि वेलनेस पर्यटक होटलों द्वारा प्रदान की गई सेवा से संतुष्ट हैं। अपने शोध परिणामों के आधार पर शोधार्थी का मत है कि वर्तमान के व्यावसायिक माहौल में सेवा की गुणवत्ता और सेवामूल्य पर्यटन व अन्य सेवा के क्षेत्रों में भी सफलता का मूलमंत्र बन गया है।

चूँकि वेलनेस पर्यटन व्यावसायिक व आर्थिक दृष्टि से सर्वथा एक नया आयाम है, इसलिए इस शोध में इस क्षेत्र की सेवा, गुणवत्ता और सेवा मूल्य के मूल्यांकन पर केंद्रित यह शोध-अध्ययन किया गया है। शोधार्थी का यह भी मत है कि इस अध्ययन में प्रयुक्त मॉडल को वेलनेस पर्यटन के अतिरिक्त अन्य सेवा-क्षेत्रों में भी व्यापक रूप से लागू किया जा सकता है।

यह गुणवत्ता एवं मूल्य सेवा के मापदंड की पद्धति वेलनेस सेवा देने वाले होटलों को अपनी संचालन-प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण निर्णय एवं कार्य व अर्थ नियोजन हेतु निर्णय लेने में सहायता कर सकती है। भारत के होटलों में इसे अपनाकर बढ़ते वैश्विक पर्यटन-क्षेत्र में अपनी स्थिति एवं स्थान सुनिश्चित किया जा सकता है।

स्वास्थ्य पर्यटन में शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक गतिविधियाँ सम्मिलित रहती हैं। इसके साथ ही प्राकृतिक वातावरण एवं स्वस्थ आहार की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, जिससे पर्यटक को एक स्वस्थ और प्रसन्नतादायक जीवनशैली प्राप्त हो सके। भारत में प्राचीनकाल में ऋषि आश्रमों, आरण्यकों, साधनास्थलों आदि में आयुर्वेद, योग, ध्यान, प्राकृतिक उपचार और आध्यात्मिक अभ्यासों की परंपरा रही है।

भारतीय जीवनपद्धति एवं जन-परंपराओं में इसके अनेक रूप और गतिविधियाँ देखे जा सकते हैं, परंतु वर्तमान में समय की आवश्यकता और परिवर्तित परिवेश व जीवनशैली में स्वास्थ्य पर्यटन जैसे नवाचार को व्यावसायिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानते हुए विकसित क्षेत्र बनाया जाना आवश्यक है।

यह भी महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि इस क्षेत्र का विकास और सफलता का आधार पर्यटकों की सकारात्मक धारणा और सेवा-संतुष्टि ही है। स्वास्थ्य पर्यटन में यह भी एक बड़ी चुनौती है कि पर्यटक अलग-अलग स्थानों से, भिन्न-भिन्न धारणाओं वाले होते हैं और उनकी सेवा के प्रति अपेक्षाएँ एवं सोच भी भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। ऐसे में प्रत्येक को संतुष्टिपूर्ण सेवा और उनकी धारणा को प्रभावित करना अत्यंत कठिन कार्य हो जाता है।

यह शोध स्वास्थ्य पर्यटन की इन चुनौतियों के समाधान के लिए भी पर्याप्त मार्गदर्शन प्रदान करता है। इसमें सेवा-गुणवत्ता और सेवा-मूल्य ज्ञात करने के लिए जो प्रश्नावली प्रयुक्त की गई, उसमें सेवा-गुणवत्ता के मापदंड को निर्धारित करने वाले महत्त्वपूर्ण पहलुओं को उजागर किया गया है। जैसे—सेवा में गुणवत्ता के लिए विश्वसनीयता, जवाबदेही, सहानुभूति, आश्वासन, मार्गदर्शन, स्पष्टता आदि तथा सेवा में मूल्यमापन के लिए कार्यात्मक मूल्य, आर्थिक मूल्य, भावनात्मक मूल्य, सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्य तथा नए मूल्य सम्मिलित हैं।

इन विभिन्न आयामों का विश्लेषण कर पर्यटकों की संतुष्टि एवं धारणाओं का सहज मूल्यांकन संभव हो जाता है। यद्यपि यह शोध-अध्ययन विशेष रूप से ऋषिकेश क्षेत्र के होटलों में स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति पर्यटकों की धारणा एवं संतुष्टि स्तर को मूल्यांकित करने के लिए किया गया है तथापि इसके परिणामों से प्राप्त तथ्यों को व्यापक स्तर पर प्रयुक्त कर होटल उद्योग में सेवा-गुणवत्ता और सेवा-मूल्य की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रयास किए जा सकते हैं।

पर्यटन की सफलता पर्यटकों की संतुष्टि और वापसी की धारणा में है। ऐसे में देव संस्कृति विश्वविद्यालय का यह शोध अत्यंत उपादेयी और प्रासंगिक तथ्यों को प्रस्तुत कर भारतीय पर्यटन में नवीन आयामों के विकास हेतु प्रबल आधार एवं प्रेरणा प्रस्तुत करता है।

❑

बदरीनाथ धाम में सनत्कुमार आदि ऋषि साधना में लीन थे। एक दिन देवर्षि नारद वहाँ पहुँचे। ऋषियों ने उन्हें चिंतित देखकर उसका कारण पूछा। देवर्षि बोले—"पृथ्वीलोक में भक्ति की उपेक्षा हो रही है। लोग भगवान को भूलकर सांसारिकता में घोर लिप्त हो गए हैं और कुमार्गगामी हो गए हैं।"

ऋषि बोले—"यह तो सचमुच चिंता का विषय है। आप धरती पर भगवन्नाम का प्रचार कीजिए, तभी इस समस्या का समाधान होगा।" देवर्षि नारद मुनियों से यह समाधान पाकर धरती पर भगवन्नाम के प्रचार में लग गए। आज भी सांसारिकता में लिप्त मनुष्य जाति को स्वयं में भक्ति जगाने की आवश्यकता है।

सात्त्विक त्याग के लक्षण

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की नवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के आठवें श्लोक की विवेचना विगत किस्त में की गई थी। इस श्लोक में भगवान कृष्ण, अर्जुन से कहते हैं कि जो कुछ कर्म है, वह दुःख रूप ही है—ऐसा समझकर कोई शारीरिक क्लेश के भय से यदि उनका त्याग कर दे तो वह राजस् त्याग करके भी त्याग के फल को प्राप्त नहीं कर पाता। यहाँ एक महत्त्वपूर्ण चिंतन भगवान देते हैं। वे कहते हैं कि राजसिक त्याग का फल सुख नहीं हो सकता; क्योंकि ये रागरूप में जन्मा है। जो राग के कारण जन्मा त्याग हो, वो शांति के स्थान पर अशांति का ही कारण बनता है। इस श्लोक में भगवान कहते हैं कि जो कर्म शारीरिक क्लेश या शरीर के कष्ट के भय से दुःखदायक समझकर त्यागा जाता है, वह राजसिक त्याग कहलाता है और उस त्याग का फल प्राप्त नहीं होता है।

इससे पहले भगवान ने यह स्पष्ट भी किया था कि नियत कर्मों का मूढ़तापूर्वक त्याग तामसिक त्याग कहलाता है और यदि शारीरिक क्लेश की चिंता में इनको त्यागा जाए तो वह राजसिक त्याग है; क्योंकि वह भय से जन्मा भाव है। त्याग का वास्तविक फल तो आसक्ति के त्याग से ही मिल पाता है, इसीलिए भगवान कहते हैं—'राजसं त्यागं कृत्वा त्यागफलं सः एव न लभेत्' अर्थात राजसिक भाव से किए गए इस त्याग का फल नहीं मिल पाता है। सारांश में कहें तो ईश्वर प्रेरित या नियत, कर्त्तव्य कर्मों का त्याग तामसिक है तो वहीं देहासक्ति के कारण किए गए कर्मों का त्याग राजसिक है। इसके उपरांत श्रीभगवान सात्त्विक त्याग के विषय में बताते हैं।]

वे कहते हैं कि—

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन।
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः॥ ९॥

शब्दविग्रह—कार्यम्, इति, एव, यत्, कर्म, नियतम्, क्रियते, अर्जुन, सङ्गम्, त्यक्त्वा, फलम्, च, एव, सः, त्यागः, सात्त्विकः, मतः।

शब्दार्थ—हे अर्जुन! (**अर्जुन**), जो (**यत्**), शास्त्रविहित (**नियतम्**), कर्म (**कर्म**), करना कर्त्तव्य है (**कार्यम्**), इसी भाव से (**इति, एव**), आसक्ति (**सङ्गम्**), और (**च**), फल का (**फलम्**), त्याग करके (**त्यक्त्वा**), किया जाता है (**क्रियते**), वही (**सः एव**), सात्त्विक (**सात्त्विकः**), त्याग (**त्यागः**), माना गया है (**मतः**)।

अर्थात हे अर्जुन! 'केवल कर्त्तव्य मात्र करना है'—ऐसा समझकर जो नियत कर्म आसक्ति और

फलेच्छा का त्याग करके किया जाता है, वही सात्त्विक त्याग कहलाता है। भगवान ने यह पहले ही स्पष्ट कर दिया है। राजसिक त्याग में शारीरिक क्लेशों के भय से कर्म करने को ही त्याग दिया गया है और तामसिक त्याग में मूढ़ता के कारण उन कर्मों को त्याग दिया गया है, जो कर्म करने हेतु आवश्यक होते हैं।

सात्त्विक त्याग तो उसको माना जाना चाहिए, जिसमें उपरोक्त दोनों तरह से त्याग नहीं किया जाता, बल्कि कर्मों को कर्त्तव्य मानकर करते हुए निष्काम भाव से, परमात्मा को समर्पित करते हुए किया जाता है। राजसिक व तामसिक त्यागों में बाह्यदृष्टि से तो ऐसा लगता है कि कुछ त्यागा गया है, पर मन व संस्कारों का संबंध जुड़ा रहता है। इसके विपरीत सात्त्विक त्याग में बाहर से कर्म करते रहने पर भी भीतर से संबंध विच्छेद हो चुका होता है। ऐसे में व्यक्ति उन कर्मों को कर्त्तव्य समझ कर ही करता है।

इसीलिए श्रीभगवान इस सूत्र में कहते हैं कि—'**कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन।**' अर्थात मात्र कर्त्तव्य कर्म करने हैं, वो कर्म करने हैं जिनमें कर्म करने की आसक्ति न हो, कर्मों के फलों के प्रति आसक्ति न हो, मन में मोहजन्य भाव न हो और भय के वशीभूत होकर उन कर्मों को न किया जा रहा हो। ऐसा करने से उन कर्मों से कर्त्ता का संबंध विच्छेद हो जाता है और संसार के साथ उनका संबंध नहीं जुड़ता।

यही कारण है कि भगवान ने इसमें आगे कहा है कि—'**सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव**' अर्थात आसक्ति और फलेच्छा का त्याग करके। ऐसा किया जाए तो वह त्याग सात्त्विक हो जाता है। सात्त्विक त्याग में कर्म और कर्मफलरूपी संसार से संबंधों का विच्छेद हो जाता है और मुक्ति का पथ प्रशस्त हो जाता है।

सारांश में कहें तो भगवान, अर्जुन को कह रहे हैं कि जो नियत कर्म, कर्त्तव्य समझकर, आसक्ति और फल का त्याग करके किया जाता है—वह त्याग सात्त्विक माना जाता है।

सात्त्विक त्याग में सात्त्विक कर्मों को नहीं त्यागा जाता; क्योंकि वे ही ईश्वरप्राप्ति में और कर्मबंधनों की पकड़ कमजोर करने में सहायक बनते हैं। यह भी सत्य है कि यदि सात्त्विक कर्म भी अहंकार से प्रेरित हैं तो वे भी बंधन का ही कारण बनेंगे, अतः उन कर्मों को भी निरासक्त होकर और फलेच्छा का त्याग करके करने का आदेश श्रीभगवान देते हैं। यदि निरासक्ति हो तो इन कर्मों को करने का भाव कर्त्तव्य भाव से स्वतः ही प्रेरित हो जाता है। इस सब गुणों के होने पर सात्त्विक त्याग की अवधारणा पूर्ण हो पाती है।

(क्रमशः)

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

भविष्य के भारत की भूमिका लिखता भारत

उत्तराखंड राज्य के इतिहास में प्रथम बार देवभूमि स्थित 18 विश्वविद्यालयों के माननीय कुलपतियों का देव संस्कृति विश्वविद्यालय में समागम हुआ। श्रावण शुक्ल एकादशी के पावन अवसर पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में '**भविष्य का भारत व हमारी भूमिका**' जैसे अति महत्त्वपूर्ण विषय पर एक विशेष संगोष्ठी का आयोजन देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ।

इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक तथा अखिल भारतीय संपर्क प्रमुख माननीय श्री रामलाल जी एवं पतंजलि विश्वविद्यालय के कुलाधिपति स्वामी रामदेव जी समेत देव संस्कृति विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति, प्रतिकुलपति एवं कुलसचिव मृत्युंजय सभागार में उपस्थित रहे।

विचार संगोष्ठी में मूल्यपरक शिक्षा, युवाओं में नैतिकता–आध्यात्मिकता का समावेश एवं समग्र विकास हेतु गहन विचार मंथन हुआ। सभी ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम के अलावा चलाए जा रहे जीवन जीने की कला, जीवन प्रबंधन, सामाजिक परिवीक्षा, सृजना आदि कार्यक्रमों को सराहा एवं प्रेरणाप्रद बताया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी ने इस अवसर पर कहा कि भारत की भूमि से ही विश्व को प्रकाशित करने वाला ज्ञान–प्रकाश निकला है, जो पूरे विश्व को आलोकित कर रहा है।

उन्होंने आगे कहा कि भारत की भूमि में ही अध्यात्म, ज्ञान और सांस्कृतिक विरासत को विश्व में पहुँचाने वाले स्वामी विवेकानंद, पूज्य गुरुदेव जैसे महान व्यक्तित्वों का आविर्भाव हुआ। यह समय भारत के जागरण का समय है, अतः हमें अपने अतीत के गौरव को याद कर भविष्य का भारत बनाना है।

स्वामी रामदेव जी ने कहा कि शिक्षा, सामाजिक सहित सभी क्षेत्रों में मानसिक, आध्यात्मिक व नैतिक दृष्टि से सबल व्यक्तियों की आवश्यकता है। अतः हमें समन्वित रूप से वैचारिक, आर्थिक और नैतिक दृष्टि से पूरे विश्व का मार्गदर्शन करने के लिए युवाओं को तैयार करना है।

स्वामी रामदेव ने यह भी कहा कि भारत के विश्वविद्यालयों को विदेशी विद्यालयों से बेहतर बनना होगा। परमपूज्य गुरुदेव का युगसाहित्य भविष्य के भारत के निर्माण में कुशल मार्गदर्शक की भूमिका निभाएगा।

विचार संगोष्ठी के मुख्य अतिथि व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय जनसंपर्क प्रमुख श्री रामलाल जी ने कहा कि भारत को दुनिया का नेतृत्व करने के लायक बनाना है। इस हेतु जन–जन में राष्ट्रप्रेम व भक्ति के भाव जाग्रत करना है।

उन्होंने यह भी कहा कि विश्व में जिन देशों ने खुशहाली पाई है, उनमें उनके राष्ट्र के नागरिकों का देशप्रेम व उनकी भक्ति और उनके अनुशासन का बड़ा योगदान रहा है। अतः हमारे विश्वविद्यालय ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करें, जो देश का सही नेतृत्व करने योग्य बन सकें। ऐसा होने से ही हमारा देश विकसित राष्ट्र की श्रेणी में अव्वल होगा।

इससे पूर्व विचार संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र का शुभारंभ श्री रामलाल जी, स्वामी रामदेव,

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलपति जी, प्रतिकुलपति जी ने संयुक्त रूप से दीप प्रज्वलन कर किया। इस अवसर पर अतिथियों को स्मृतिचिह्न, गायत्री महामंत्र लिखित चादर, युग साहित्य, गंगाजल आदि भेंटकर सम्मानित भी किया गया।

विदित हो कि इस विशेष आयोजन में राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों यथा देव संस्कृति विश्वविद्यालय, पतंजलि विश्वविद्यालय, हेमवती नंदन बहुगुणा चिकित्सा विश्वविद्यालय, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, जीबी पंत विश्वविद्यालय, उत्तराखंड आयुर्वेद विश्वविद्यालय, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, स्वामी राम हिमालयन विश्वविद्यालय सहित 18 विश्वविद्यालयों के कुलपति और कुलाधिपति एवं उनके प्रतिनिधिगण तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अनेक पदाधिकारीगण उपस्थित रहे।

नवप्रवेशी विद्यार्थियों के स्वागत में उन्नयन कार्यक्रम का आयोजन देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। इस क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के आध्यात्मिक वातावरण में वरिष्ठ विद्यार्थी नवप्रवेशी विद्यार्थियों का स्वागत भावपूर्ण हृदय से करते हैं। विश्वविद्यालय में नए विद्यार्थियों के स्वागत का यह चलन वर्षों पहले से बना हुआ है। जिसे स्वयं परमश्रद्धेय कुलाधिपति डॉ0 प्रणव पण्ड्या जी ने 'उन्नयन' का नाम दिया। 'उन्नयन' शब्द का अर्थ है—ऊपर की ओर उठते जाना।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में नवप्रवेशी छात्र-छात्राओं के स्वागत में उन्नयन कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे प्रतिकुलपति जी ने दीप प्रज्वलन के साथ इस कार्यक्रम का शुभारंभ किया। इस अवसर पर विद्यार्थियों द्वारा प्रज्ञागीत, समूह नृत्य और पूज्य गुरुदेव के विचारों पर आधारित लघु नाटिका का भावपूर्ण प्रस्तुतीकरण भी किया गया।

कुलपति श्री शरद पारधी जी ने अपने वक्तव्य में विद्यार्थियों की असाधारण प्रतिभा की प्रशंसा करते हुए कहा कि इस प्रकार की प्रस्तुतियाँ विश्वविद्यालय के सांस्कृतिक धरोहर को और भी समृद्ध बनाती हैं। स्वागत का सुसंस्कृत स्वरूप हमें देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उन्नयन के रूप में देखने को मिलता है। इस कार्यक्रम ने न केवल विश्वविद्यालय की परंपराओं को पुनर्जीवित किया, बल्कि नवागत विद्यार्थियों के हृदय में सांस्कृतिक मूल्यों की गहरी छाप भी अंकित कर दी।

जीवन विद्या का आलोक केंद्र देव संस्कृति विश्वविद्यालय में 78वाँ स्वतंत्रता दिवस उत्साह एवं उमंग के साथ मनाया गया। मुख्य अतिथि अखिल विश्व गायत्री परिवार की संरक्षिका परमश्रद्धेया शैल जीजी, प्रतिकुलपति जी और आदरणीया शेफाली दीदी ने देश के शौर्य के प्रतीक राष्ट्रीय ध्वज का पूजन वैदिक मंत्रोच्चार के साथ किया तत्पश्चात फहराया। कुलपिता परमपूज्य गुरुदेव की प्रतिमा के समक्ष परमश्रद्धेया शैल जीजी ने महान स्वतंत्रता संग्राम सेनानी परमपूज्य गुरुदेव को श्रद्धांजलि देते हुए राष्ट्र के उत्थान एवं विश्वशांति की प्रार्थना की। इस अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय कुलपति, कुलसचिव सहित सभी अधिकारीगण, संकायाध्यक्ष, विभागाध्यक्ष, शिक्षक एवं विद्यार्थियों ने राष्ट्रगान गाकर राष्ट्रीय ध्वज का सम्मान किया।

इस अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के एनएसएस, एनसीसी, स्काउट-गाइड सहित सभी शिक्षक एवं विद्यार्थियों ने तिरंगा रैली निकाली। हर घर तिरंगा अभियान को सफल बनाने एवं तिरंगा की गरिमा को सदैव ऊँचा रखने के साथ उसकी गरिमा के अनुरूप आचरण बनाए रखने का आवाहन किया गया। विद्यार्थियों ने देश की रक्षा एवं राष्ट्रहित में अपना योगदान देने तथा नशामुक्त भारत बनाने का संकल्प लिया।

समापन अवसर पर प्रज्ञेश्वर महाकाल के समक्ष एकत्र होकर कुलपति महोदय एवं सभी गणमान्य अतिथियों द्वारा शौर्य दीवार पर देश के वीर शहीदों को पुष्पांजलि अर्पित कर रैली का समापन किया गया। इसके साथ ही स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर 'एक पेड़ माँ के नाम' अभियान का भी शुभारंभ किया गया।

माननीय कुलपति महोदय ने विश्वविद्यालय परिसर में पौधारोपण कर उपस्थित जनसमूह को पेड़ लगाने का संदेश दिया। तत्पश्चात कई शिक्षकों ने अपनी माँ के नाम पौधा लगाकर इस अभियान को गति देने के साथ ही दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत बने। इससे पूर्व 14 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या के अवसर पर श्रीराम सभागार में विभाजन विभीषिका स्मृति दिवस एवं जल संरक्षण कार्यक्रम का भी आयोजन किया गया।

प्रतिकुलपति जी के मार्गदर्शन में आयोजित इस कार्यक्रम का उद्देश्य वर्तमान युवा पीढ़ी को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के बलिदान एवं शौर्य की गाथा के साथ विभाजन की विभीषिका को भी जानने-समझने एवं जल संरक्षण के साथ पर्यावरण के प्रति जागरूकता का अवसर प्रदान करना रहा।

इस अवसर पर उपस्थित सभी एनएसएस, एनसीसी, स्काउट-गाइड एवं अन्य विद्यार्थियों ने देशसेवा का संकल्प लिया। कार्यक्रम के दौरान विश्वविद्यालय के समस्त संकायाध्यक्ष, विभागाध्यक्ष, अधिकारी, आचार्य-आचार्यासहित सभी विद्यार्थीगण उपस्थित रहे।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय स्नातक अंतिम वर्ष के छात्र नितेश साहू ने वर्ल्डवाइड बुक ऑफ रिकॉर्ड्स में जगह बनाकर विश्वविद्यालय एवं उत्तराखंड का नाम रोशन किया। 21 जून, 2024 को 10वें अंतरराष्ट्रीय योग दिवस पर जीआईएसए (भारत) द्वारा आयोजित एक ऐतिहासिक कार्यक्रम में उसने भाग लिया। इस ऑनलाइन कार्यक्रम में 758 प्रतिभागी एक साथ आए।

सबसे अधिक लोगों द्वारा एक साथ खड़े होकर योग करने का विश्व रिकॉर्ड केवल एक मिनट में, नितेश और अन्य लोगों ने खड़े होकर 10 योगासन पूरे किए और वर्ल्डवाइड बुक ऑफ रिकॉर्ड्स में जगह बनाई।

कार्यक्रम के दौरान नितेश के समर्पण को स्वर्णपदक और भागीदारी प्रमाणपत्र से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने उन्हें बधाई दी और विश्वविद्यालय एवं दुनिया भर में योग विज्ञान के पारंपरिक कौशल का प्रतिनिधित्व करने के लिए उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना की।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय संगीत संस्थान स्पिक मैके द्वारा आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम में सात्त्विक वीणा के जनक, तंत्री सम्राट पंडित सलिल भट्ट जी और प्रसिद्ध तबलावादक श्री हिमांशु महंत जी की जुगलबंदी से कलाप्रेमियों को एक अद्वितीय अनुभव प्राप्त हुआ। इस आयोजन का उद्देश्य भारतीय शास्त्रीय संगीत की समृद्ध परंपरा को प्रोत्साहित करना और उसे युवापीढ़ी तक पहुँचाना था।

कार्यक्रम से पूर्व पंडित सलिल भट्ट और श्री हिमांशु महंत जी ने विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी से भेंट की, जिस दौरान दोनों को स्वावलंबन केंद्र में निर्मित जूट बैग उपहारस्वरूप दिया गया। कार्यक्रम के अंत में संगीत विभाग के विभागाध्यक्ष ने पंडित सलिल भट्ट जी को धन्यवाद ज्ञापित किया और उन्हें सम्मानित किया। साथ ही विश्वविद्यालय के कुलपति जी ने मुख्य अतिथि के साथ समस्त सदस्यों को अपना आशीर्वचन प्रदान किया।

सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण एवं उत्थान के क्रम में यूनिसेफ साझेदारी विशेषज्ञ सुश्री मिकी

धमांदा का विश्वविद्यालय सुभागमन हुआ। सुश्री धमांदा ने यूनिसेफ और गायत्री परिवार के बीच संभावित भविष्य के सहयोग पर चर्चा करने के लिए प्रतिकुलपति जी से भेंटवार्त्ता की।

प्रतिकुलपति महोदय ने बताया कि गायत्री परिवार की व्यापक पहुँच का लाभ विश्वविद्यालय के अद्वितीय शैक्षिक वातावरण और प्रभावशाली पहलुओं को संचालित करने के लिए अति महत्त्वपूर्ण है।

चर्चाएँ दोनों संगठनों के साझा मूल्यों और लक्ष्यों को संरेखित करने पर केंद्रित रहीं। दोनों पक्षों ने महत्त्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों को संबोधित करने और बड़े पैमाने पर समुदायों की भलाई में योगदान करने एवं भविष्य में मिलकर काम करने की संभावनाओं के विषय में अत्यंत उत्साह व्यक्त किया।

सांस्कृतिक संगम का लाभ उठाने के क्रम में कजाकिस्तान के प्राण स्टूडियो का विश्वविद्यालय आगमन हुआ। प्रतिनिधिमंडल ने विश्वविद्यालय का भ्रमण किया, जिसका नेतृत्व मिस एसेल किन्झिगारिनोवा ने किया। प्रतिकुलपति जी ने सदस्यों का स्वागत एवं भेंटवार्त्ता की।

इस समागम से प्रतिभागियों ने न सिर्फ विश्वविद्यालय में चल रही मूल्यपरक शिक्षा एवं गायत्री परिवार की आध्यात्मिक विरासत का अनुभव किया, बल्कि दोनों देशों के बीच गहरे सांस्कृतिक संबंधों को गहराई से समझा एवं उजागर भी किया।

शिक्षा के साथ-साथ स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी अग्रणी भूमिका का निर्वहन देव संस्कृति विश्वविद्यालय कर रहा है। योग, आयुर्वेद, यज्ञ एवं विभिन्न वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों पर यहाँ विश्वस्तरीय शोध किए जा रहे हैं। इसी उद्देश्य से गुरुग्राम, हरियाणा स्थित विशिष्ट चिकित्सा संस्थान मेदांता अस्पताल से चिकित्सकों के एक दल का आगमन देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। आगमन पश्चात उन्हें अखिल विश्व गायत्री परिवार एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय की स्वास्थ्य गतिविधियों से परिचित करवाया गया।

उन्होंने प्रतिकुलपति महोदय जी से भेंटवार्त्ता की एवं भारतीय प्राचीन चिकित्सापद्धति के विषय में जानकारियाँ प्राप्त कीं। इस प्रकार देव संस्कृति विश्वविद्यालय अनेकों महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों को पूर्ण करते हुए शिखर को स्पर्श करता दिखाई पड़ता है। ❑

मनुष्य बन गया और विधाता उसे धरती पर भेजने लगे तो भेजते हुए बोले—"पुत्र! तू मानव जीवन का उपयोग आत्मकल्याण के लिए ही करना ताकि मृत्यु आने पर पछताना न पड़े।" मनुष्य ने कहा—"जी प्रभु! पर आप मृत्यु आने से पूर्व चेतावनी जरूर दे देना, ताकि मैं समय रहते सँभल सकूँ।" विधाता ने हामी भरी। पृथ्वी पर आते ही मनुष्य अपने पथ से भटक गया और मात्र इंद्रियसुखों में रस लेने लगा। समय आया और वह वृद्धावस्था को प्राप्त कर परमधाम को गति कर गया। वहाँ पहुँचकर उसने विधाता से कहा—"आपने वचन दिया था कि आप मृत्यु आने पर चेतावनी देंगे, पर मुझे तो ऐसा कोई संदेश नहीं मिला।" विधाता बोले—"तेरी आँखों से दिखना, कानों से सुनना कम पड़ने लगा, हाथ-पैर कम काम करने लगे, पर तब भी तू उन्हें भूलकर सुखों में रस लेता रहा तो इसमें किसका दोष है। यही तो तेरे लिए चेतावनी थी।" सत्य है कि परमात्मा हर घड़ी चेताते हैं, पर मनुष्य ही यह बहुमूल्य जीवन व्यर्थ गँवा देता है।

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी

ज्ञान की गंगा का अवतरण

परम वंदनीया माताजी के उद्‌बोधनों में एक अलौकिक मधुरता भी है और एक सामुद्रिक गांभीर्य भी। उनके शब्द जहाँ अंतर्मन की प्यास को बुझाते हुए प्रतीत होतें हैं तो वहीं ज्ञान की क्षुधा को तृप्त भी करते हैं। अपने एक ऐसे ही प्रस्तुत उद्‌बोधन में वंदनीया माताजी प्रत्येक साधक को स्मरण दिलाती हैं कि यदि पूज्य गुरुदेव ने भागीरथ की तरह से तपस्या न की होती तो जन-जन को गायत्री की उपासना सुलभ न हो पाई होती। वंदनीया माताजी यह भी स्मरण दिलाती हैं कि जन-जन को गायत्री का अधिकार दिलाने के लिए पूज्य गुरुदेव ने अनेकों कष्टों को वरण किया और तब महर्षि भगीरथ की तरह ज्ञान की गंगा का अवतरण करने में सफल हो सके। उनकी उपासना वस्तुस्थिति में जीवन शोधन की उपासना है। वंदनीया माताजी हर गायत्री परिजन को प्रेरित करती हैं कि वे अपने भीतर की बुराइयों को हटाने की साधना करें और पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुँचाने की साधना करें। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को...........

गायत्री मंत्र के तीन चरण

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ बोलें—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

आत्मीय परिजनो, आज के ही दिन माँ गायत्री का प्रादुर्भाव हुआ, आज के ही दिन गंगा का प्रादुर्भाव हुआ। भगीरथ ने तपश्चर्या की और वे गंगा को लेकर के धरती पर आए। एक भगीरथ और पैदा हुए, जो ज्ञान की गंगा लेकर के आए और उन्होंने माँ गायत्री को अपने हृदय में तपश्चर्या के द्वारा धारण किया।

गायत्री मंत्र के 24 अक्षर होते हैं, 24 अवतार होते हैं, तीन चरण होते हैं, जिसको त्रिपदा कहा गया है। उपासना, साधना, आराधना— यह गायत्री मंत्र के तीन चरण हैं, जिनको आप लोग धारण किए हुए हैं। उनके उद्देश्यों के, उनके लक्ष्यों के बताए गए मार्ग पर आप चल रहे हैं।

गायत्री क्या थीं ? यह गायत्री केवल थीं तो ब्राह्मणों की, पर ब्राह्मण भी इसको नहीं जानते थे। धूल में दबी हुई, जिस तरीके के शाप से अहल्या पत्थर की हो गई थी और जब भगवान राम के चरण पड़े तो उसका उद्धार होता हुआ चला गया।

इसी तरीके से गायत्री शापबद्ध थीं, यह तो मैं नहीं कहती हूँ, लेकिन एक बात मैं कहती हूँ कि जो हमारी माँ पाषाण के नीचे दबी हुई थी, जो धूल के नीचे दबी हुई थी, उस माँ को उन्होंने अपने हृदय में धारण किया और हृदय में स्वयं ही धारण नहीं किया, बल्कि जन-जन तक गायत्री माँ को उन्होंने पहुँचाया। घर-घर तक पहुँचाया।

आपको नहीं मालूम कि उन्होंने जिंदगी में कितने कष्ट उठाए? आपको नहीं मालूम, आपको तो पका हुआ मिल गया है और उन्होंने ये पकाया है। जो पकाता है, वह महत्त्व समझता है, जो पैसा कमाता है, वह उसका महत्त्व समझता है और जिसने कमाया ही नहीं, बाप-दादा की कमाई है, वह उस पैसे का क्या महत्त्व समझेगा? उस पैसे का महत्त्व नहीं समझेगा। आपने कमाया नहीं है, इसलिए आपको उसके महत्त्व का पता नहीं है।

जीवन-शोधन की उपासना

उन्होंने जिंदगी में कमाया और सारी जिंदगी उसी में झोंक दी। न परवाह की बच्चों की, न परवाह की किसी रिश्तेदार की; न परवाह की किसी और की। वे अपने सिद्धांत के, अपने उसूलों के धनी थे। हमेशा उसी पर वे चलते रहे और गायत्री माता को जन-जन का, घर-घर का बना दिया और लाखों के हाथों में माला थमा दी। माला ही नहीं थमा दी, यही नहीं कहा कि एकांत में बैठ करके आप उपासना करना, वरन उन्होंने एक और बात कही।

उन्होंने यह कहा कि तुम अपने जीवन-शोधन के लिए समय जरूर निकालना, ताकि जो भी आपके अंदर की मलिनता है, वह मलिनता अंदर से निकलती हुई चली जाए। उन्होंने पलायनवादी नहीं बनाया। उन्होंने तो एक सद्गृहस्थ के तरीके से यह बताया कि सद्गृहस्थ रहते हुए भी राष्ट्र के लिए, समाज के लिए बहुत कुछ किया जा सकता है।

गुरुदेव ने कितने कष्ट उठाए?

यही नहीं कि हम जंगल में चले जाएँ, धूनी रमा लें और स्वर्ग-मुक्ति की बात सोचने लगें। मान लीजिए एक की स्वर्ग-मुक्ति हो भी गई, जब हमारा सारा देश अग्नि में झुलस रहा हो, विभीषिकाओं में झुलस रहा हो, सारा विश्व विनाश के कगार पर खड़ा हो, तो फिर बताइए कि एक की मुक्ति हो भी गई तो उससे क्या बनेगा? जब तक सारे संसार का कल्याण नहीं हो जाता, पीछे नंबर अपना है, यही काम उन्होंने किया।

सर्वदा ईश्वर का नाम-गुणगान करना चाहिए, सत्संग करना चाहिए-बीच-बीच में भक्तों और साधुओं से मिलना चाहिए। संसार में दिन-रात विषय के भीतर पड़े रहने से मन ईश्वर में नहीं लगता। कभी-कभी निर्जन स्थान में जाकर ईश्वर की चिंता करना बहुत जरूरी है।

प्रथम अवस्था में बीच-बीच में एकांतवास किए बिना ईश्वर में मन लगाना बड़ा कठिन है। पौधे को चारों ओर रूँधना पड़ता है, नहीं तो बकरी चर लेगी। ध्यान करना चाहिए—मन में, कोने में और वन में। सदा-सर्वदा सत्-असत् विचार करना चाहिए। ईश्वर ही सत् अथवा नित्य वस्तु है और सब असत्, अनित्य।

बारंबार इस प्रकार विचार करते हुए मन से अनित्य वस्तुओं का त्याग करना चाहिए। —*स्वामी रामकृष्ण परमहंस*

उन्होंने नारियों के लिए 'स्त्रियों का गायत्री अधिकार' नामक पुस्तक लिखी। उसका इतना विरोध हुआ, पंडों ने अपने ढंग से विरोध किया और आर्यसमाज ने अपने ढंग से विरोध किया। सब विरोध करते हुए चले गए, लेकिन उन्होंने किसी की भी परवाह नहीं की।

जब उन्होंने हजार कुंडी यज्ञ किया तो लोगों ने मखौल उड़ाया। उन्होंने कहा कि लोग पागल हैं। हम उनके लिए पागल हैं, हमारे लिए वे पागल हैं। वे अभी हमारे अंतरंग को पहचान नहीं पाए कि हम क्या कर रहे हैं? उसके द्वारा हम क्या करने जा रहे हैं। हमें बहुत कुछ करना है। हमें जब करना है तो फिर किसी का हमें डर क्या है? कोई हमारा साथ देगा-न-देगा, मत दे। तेरी इच्छा। हम तो तुझे कलेजे से लगाएँगे, पर तू साथ देता है कि नहीं देता, हमें नहीं मालूम। मत दो कोई भी साथ नहीं देगा तो अकेले चलेंगे।

एकला चलो रे

रवींद्रनाथ की एक कविता है, उसमें है— एकला चलो रे....एकला चलो रे। अकेले चलेंगे और अकेले चलकर के उन्होंने कितना बड़ा संगठन तैयार किया, कितना बड़ा संगठन बना दिया। देवत्व का जागरण उन्होंने हरेक हृदय में कर दिया, हर किसी के हृदय में पौधे को स्थापित कर दिया, बीज को डाल दिया, अब रह गई खाद-पानी की बात, तो खाद-पानी देंगे और वह फूलेगा-फलेगा अन्यथा बीज गल करके रह जाएगा। बीज गल करके न रह जाए, इसलिए तरह-तरह से उन्होंने उपाय बताने की चेष्टा की।

वाणी के द्वारा, लेखन के द्वारा, अपने व्यवहार के द्वारा, अपने चरित्र के द्वारा उन्होंने हर संभव बताने की कोशिश की है। उन्होंने जनता के साथ में गद्दारी नहीं की। जिस तरीके से मदारी भीड़ इकट्ठी करता है, इस तरह से उन्होंने भीड़ इकट्ठी नहीं की। उन्होंने हर किसी में अपने प्राण फूँकने की कोशिश की। अपना एक अंश देने की कोशिश की और इसके लिए वे रात-रात भर जगे। आपको नहीं मालूम हमको मालूम है, हम साथ रहे हैं। साथ रहे तो जो हमको मालूम है, वह आपको कैसे मालूम हो सकता है। आपको मालूम नहीं हो सकता, मुझे ज्यादा मालूम हो सकता है; क्योंकि मैं उनके निकट रही हूँ।

नारी के लिए पति का महत्त्व

नारी के जीवन में पति का बहुत महत्त्व है। पति के अलावा और सब रिश्ते नंबर दो पर, नंबर तीन पर आते हैं। नारी के लिए पति ही उसका आराध्य है, पति ही उसका उपास्य है। सबके लिए है कि नहीं है मुझे नहीं मालूम, लेकिन मैंने देखा, मैंने समझा है।

कइयों का यह सवाल है कि साहब! आपकी उम्र में और गुरुजी की उम्र में तो अंतर है, हाँ बेटा जरूर अंतर है मैं ये नहीं कहती, लेकिन भावनाओं से और सिद्धांतों से हम एकदूसरे के प्रति ऐसे रहे कि हमारे जीवन की कोई कल्पना नहीं कर सकता।

बच्चे के लिए पिता की उम्र ज्यादा हो सकती है, शिष्य के लिए गुरु की उम्र ज्यादा हो सकती है। नाती के लिए दादा की उम्र ज्यादा हो सकती है, लेकिन पत्नी के लिए, चाहे कितना ही बुढ़ापा क्यों न आ जाए? 100 वर्ष का क्यों न हो जाए, 150 साल का क्यों न हो जाए? लेकिन पति और पत्नी के जो संबंध हैं, वे तो अटूट हैं, एकदूसरे के वे पूरक हैं, पूरक बनना अभी कोई नहीं जानता।

हमने समझा है बेटे और हमने समझा ही नहीं है, बल्कि उस रास्ते पर हम चलते हुए चले गए, जहाँ उन्होंने कहा कि इस तरीके से चलना है, वही हमने शिरोधार्य किया। गलत रास्ता तो उन्होंने नहीं

बताया, ऐसी तो मैं किसी को सलाह नहीं दूँगी कि आप ऐसे अंधविश्वासी बन जाइए, ऐसी नारी बन जाइए कि गलत हो तो गलत को भी स्वीकार कर लीजिए।

गलत को तो स्वीकार नहीं करें, गलत को भी अच्छे ढंग से समझाने का प्रयास करें, ताकि गलतियाँ भी हटती हुई चली जाएँ, लेकिन अच्छाइयों के लिए तो कदम-से-कदम बढ़ाना चाहिए। अपने जीवन में कदम-से-कदम बढ़ा करके हम आगे चलते हुए चले गए और उन्होंने उस स्थान पर लाकर हमें बैठा दिया जहाँ वे भी बैठते थे। वहाँ उन्होंने बैठा दिया, यह उनकी सहजता थी, सरलता थी।

गुरुदेव और माताजी एकप्राण

हमारा योगदान यह था कि हम साथ-साथ रहे और प्राण से, जीवात्मा से अभी भी हम साथ हैं। अभी भी हमको ऐसा महसूस होता है कि वे हमारे पास ही बैठे हैं। शरीर हमारे बीच में नहीं है, पर शरीर से ज्यादा तो हम उस आत्मा से जुड़े हुए हैं, जो हमको पल-पल निर्देश देती है, हमको प्रेरणा देती है और हमको आगे चलाने के लिए भरसक प्रयास करती है और धकेलती है। चलो—चलो, जो हमारे काम हैं उन कामों में योगदान दो, आँखों में आँसू नहीं, ओंठों पर मुसकान, आँखों के आँसू से काम नहीं चलेगा, ओंठों की मुस्कान से काम चलेगा।

दूसरों को गले लगाओ और दूसरों के दरदों को बाँटो और अपनी खुशियाँ उनको दो। खुशियाँ बाँटो और दूसरों के दरद को अपनाओ, दूसरों के दरदों को पीना सीखो। उन्होंने सारी जिंदगी दूसरों के दरदों को ग्रहण किया और पिया और हम भी उसी रास्ते पर चल रहे हैं, हम भी उन दरदों को पिएँगे। हम इतने मुलायम नहीं हैं, बहुत कड़े हैं, बहुत शक्ति है, अपार शक्ति है। उम्र तो उम्र ही होती है, उसे तो नकारा नहीं जा सकता। शरीर के कल-पुरजे भी ढीले पड़ते हैं, उन्हें भी नहीं नकारा जा सकता, पर जो आंतरिक शक्ति होती है, वह शक्ति अलग चीज है। आपकी भी शक्ति कम नहीं होनी चाहिए, क्योंकि आप भी जुड़े हुए हैं। जो कार्य वे छोड़ गए हैं, उन कार्यों को हमें आगे गति देनी है।

दें गति गुरुदेव के विचारों को

हमें घर-घर जाना पड़ेगा। हमको अपनी इज्जत को नहीं देखना, हमें अपने बड़प्पन को नहीं देखना।

यतो वाचो निवर्तन्ते।
अप्राप्य मनसा सह।
आनंदं ब्रह्मणो विद्वान्।
न बिभेति कदाचनेति।
तस्यैष एवं शारीर आत्मा
यः पूर्वश्य।

—*तैत्तिरियोपनिषद्*

अर्थात जहाँ से मन सहित वाणी आदि इंद्रियाँ उसे पाकर लौट आती हैं, उस ब्रह्मानंद को जानने वाला पुरुष सदा निर्भय है तथा उस मनोमय पुरुष की आत्मा वही परमात्मा है, जिसका वर्णन सभी करते हैं।

जिस तरीके से ईसाई मिशन बढ़ता हुआ चला गया, कैसे बढ़ता हुआ चला गया? यह उनके कार्यकर्त्ताओं पर निर्भर है। आप भी डाल-डाल और पात-पात मत डोलिए, आप भी यह मानिए कि हम गुरुजी के हैं। उस राम के हैं, एक राम ने तो केवल अयोध्या में ही रामराज्य स्थापित किया था और ये राम तो ऐसे पैदा हुए कि जिन्होंने यह चाहा कि सारे विश्व को हम एक सूत्र में बाँध देंगे। यह उनकी भावनाएँ

थीं और यह हमारी भी हैं, पूरे विश्व को नहीं तो अपने राष्ट्र को तो बना देंगे। उन्होंने पूरे विश्व में छा जाने की कोशिश की।

छा जाने का मतलब विचारधारा को, सिद्धांत को फैलाना, विचारों को फैलाना, साहित्य को फैलाना मूल उद्‌देश्य था। ज्ञान का प्रवाह, ज्ञान की धारा और ज्ञान की गंगा को बहाना उद्‌देश्य था, जिस तरीके से भगीरथ ने गंगा बहाई, तपश्चर्या की और गंगा शंकर जी की जटाओं में से उत्पन्न होती हुई चली आईं।

गंगा का वेग कौन सहेगा ? शंकर जी। ज्ञान का वेग कौन सहेगा ? गुरुजी, जिनका नाम श्रीराम शर्मा है, ज्ञान का वेग वे ही सहेंगे। उन्होंने उस ज्ञान के वेग को सहा और उस ज्ञान के वेग को सारी धाराओं में फैलाते हुए चले गए और जन-जन में उल्लास बाँटते हुए चले गए, प्यार बाँटते हुए चले गए और सबको धन्य बनाते हुए चले गए।

ये था उनका जीवन, जिसके लिए मैं कोई उदाहरण नहीं जोड़ रही, मैं आपको केवल उन्हीं की बात कहूँगी। आज उनकी तीसरी पुण्यतिथि है। हम आज और भी नया संकल्प करें, जो संकल्प हमारे पहले थे, वे हमें पूरे करने हैं और आगे की भी घोषणा करेंगे और नए संकल्पों को भी हम पूरा करेंगे।

उनकी पुण्यतिथि पर हमें अपने सच्चे मन से संकल्प लेना है कि आजीवन हम जिस तरीके से जुड़े थे और भी हम प्रखर होते हुए चले जाएँगे, हम जुड़ते हुए चले जाएँगे। वे कहाँ गए, कहीं नहीं गए, हमारे अंतरंग में हैं, हमारे रोम-रोम में हैं। बाहर कहाँ है शरीर, शरीर के लिए रोना आ रहा है ? नहीं शरीर तो पंचतत्त्वों का बना हुआ है, वह तो नाशवान है, वह तो एक दिन जाएगा ही।

जितने भी अवतार हुए हैं और जो भी इस पृथ्वी पर आए हैं, उन सबको एक-न-एक दिन जाना ही पड़ा। भगवान राम को जाना पड़ा था, भगवान कृष्ण को जाना पड़ा था, भगवान बुद्ध को जाना पड़ा, गांधी जी को जाना पड़ा, ईसा को जाना पड़ा, सभी को जाना पड़ा। सभी अवतारों को जाना पड़ा है; क्योंकि यह शरीर सीमित होता है और इसकी आवश्यकता होती है।

वे कई सालों से हमेशा यह कहते आए हैं। उन्होंने कहा कि देखो शरीर की अपनी एक आवश्यकता होती है और शरीर एक सीमित काम कर सकता है और जब मैं कारणशरीर में और सूक्ष्मशरीर में जाऊँगा तो, मैं विशाल काम कर सकता हूँ और सारे वातावरण में छा सकता हूँ। इस समय मैं अपने शरीर में रह रहा हूँ तो शरीर से जितना काम हो सकता है वह किया।

भावना के साथ कर्त्तव्यपालन

ऐसे तो पाँच शरीरों का काम उन्होंने किया। अपने एक शरीर में रहते हुए उन्होंने पाँच शरीरों का काम किया और उन्होंने यह कहा कि मैंने अपनी जिंदगी का सारा आनंद उठा लिया, अब तो मैं अपना जो भी जीवन जी रहा हूँ, फोकट में जी रहा हूँ। यह उनके शब्द थे और उनके शब्द थे कि अन्य महिलाओं के तरीके से तुम उतनी भावुक नहीं बनोगी।

भावुक तो मैं हूँ। भावना मेरे अंदर है, पर मैं कर्त्तव्य को भी अच्छी तरह से समझती हूँ। जो मेरे हाथ में जिम्मेंदारी थमा गए, उसे मैं अच्छी तरह से समझ रही हूँ और अपनी छाती से भी लगाए हुए हूँ और जब तक जीवन है, तब तक और जीवन नहीं रहेगा तो जिस तरीके से गुरुजी सारे वातावरण पर छाए हुए हैं, मैं भी उनके साथ-साथ छाई रहूँगी। आप कभी भी अलग नहीं पाएँगे कि गुरुजी अलग हैं और माताजी अलग हैं। हम आपसे अलग नहीं हैं।

बेटे, हम आपके समीप हैं, लेकिन आपको दो कदम उठाने पड़ेंगे। माँ एक ही काम नहीं करती

है, जो माँ केवल प्यार करती है, वो बच्चों को बिगाड़ लेगी। उसकी एक आँख प्यार की होती है और एक आँख उसकी सुधार की होती है। एक से लताड़ भी लगाती रहेगी, दंगा मचाएगा तो समझ ले तेरी पिटाई करेगी और दूसरे से यह भी कहती रहती है कि पिटाई करूँगी तो इसके लग जाएगी, दोनों काम करती है। दोनों काम अर्थात पिता का भी काम करना है और माँ का भी काम करना है, दोनों काम करने हैं और तुम्हें भी एक ही रूप में दोनों को समझना भी है, समझाना भी है।

हमारे लिए क्या दिशा-निर्देश है ? आप इनको नहीं समझ पाए, जीवन के लक्ष्य को नहीं समझ पाए, अपने कर्त्तव्य को नहीं समझ पाए, समाज को नहीं समझ पाए, राष्ट्र को नहीं समझ पाए ? जिसमें कितनी विभीषिका है।

इन विभीषिकाओं के लिए यदि आपने कोई कदम नहीं उठाया तो फिर गुरुजी के शिष्य कैसे हो गए ? केवल माला पहनने के लिए हो गए। उन्होंने आपको केवल माला फेरना ही नहीं बताया था।

उन्होंने हमको भी केवल माला ही नहीं बताई। उन्होंने यहाँ 6 घंटे रोज उपासना की थी, लेकिन हमसे यह कहा था कि तुम उपासना जितनी बन पड़े उतनी करो, लेकिन सारा-का-सारा जो काम बताया जा रहा है उसमें योगदान दो, तुम वह काम करो और वही हमने किया।

बुराइयाँ हटाने की साधना

आपके लिए भी यही निर्देश है कि आप पूजा-उपासना तो थोड़ी-बहुत करना, लेकिन अपनी मँजाई ज्यादा करना कि कहाँ आपके अंदर बुराइयाँ पनप रही हैं ? उन बुराइयों को निकालो। सारे समाज में से सारी बुराइयों को निकालना पड़ेगा। वे आसानी से नहीं निकलेंगी, जड़ जमाए बैठी हैं।

दहेज से लेकर, मृत्युभोज से लेकर और नशा से लेकर, निरक्षरता से लेकर के न जाने कितनी-कितनी बुराइयाँ जड़ जमाए बैठी हैं। इन जड़ों को बिलकुल साफ करना है। जहाँ हमें पेड़-पौधे लगाने हैं, जहाँ हमें साक्षरता प्रदान करनी है, दहेज के लिए विरोध करना है और भी हमारे जो राष्ट्रीय कार्यक्रम हैं, वह भी हमें पूरे करने हैं और अपने मिशन को भी हमें पूरा करना है।

उसके लिए हमें ज्यादा-से-ज्यादा समय निकालना पड़ेगा। केवल अपनी घर-गृहस्थी तक सीमित मत रहो। यह मत करो कि सारी जिंदगी इन औलादों के लिए ही हो जाए। सारी जिंदगी आपके बाल-बच्चों के लिए, पत्नी के लिए, इनके लिए ही बरबाद हो जाए। एक दिन ऐसे काल के थपेड़े पड़ेंगे कि उस दिन पछताते हुए रह जाएँगे। हाय रे ! हमें ऐसी बहुमूल्य जिंदगी मिली, हमें मानव जीवन मिला और हमने यों ही तबाह कर दिया। हमने इसका महत्त्व नहीं समझा। यदि यह किसी के काम आ जाता तो हम धन्य हो जाते।

मात्र अपने लिए नहीं जिएँ

पशु का चमड़ा काम आ जाता है, उसके पर्स बन जाते हैं, जूते बन जाते हैं, उसकी खाल काम आ जाती है, लेकिन मनुष्य का तो कुछ काम नहीं आता। यह तो जाता है तब भी इसको काठी, कफन, लकड़ी, सामग्री, घी जाने क्या-क्या चाहिए ? तब भी चाहिए और जाते-जाते भी चाहिए। वो जाता भी चुपचाप नहीं है। चुपचाप चला जाए, न माँगे तब भी माँगता है। सिकंदर के तरीके से जीना ठीक नहीं।

पहले सिकंदर खून--खराबे की ओर बढ़ा और जब उसे पश्चात्ताप हुआ तो मरते समय उसने यह कहा कि मेरे दोनों हाथ ताबूत से बाहर निकाल देना; ताकि दुनिया वाले यह देखें कि इस सिकंदर

ने कितना कमाया, कितना खून-खराबा किया और आज दोनों हाथ फैलाए जा रहा है। कुछ भी नहीं है। एक कौड़ी भी हाथ में नहीं है। किसके लिए कमाया? बच्चों के लिए, पत्नी के लिए, नहीं इसमें औरों का भी हिस्सा है, समाज का भी हिस्सा है, इसमें राष्ट्र का भी तो हिस्सा है कि केवल आपका ही है? आपका नहीं है, आपके गुरु का भी है, आपकी माँ का भी हिस्सा है।

तो क्या करें माताजी? फिर आपके लिए साड़ी लाएँ, खाने को लाएँ? नहीं बेटा, आपसे हमें कुछ नहीं चाहिए। हम कभी भी यह नहीं कहेंगे कि हमारे लिए लाइए, हमको नहीं चाहिए, हमारे लिए तो आ जाता है, इतना पर्याप्त आ जाता है। वह साल भर में भी नहीं खरच होता है और पैदा हो जाता है, लड़का भेज देता है। हम पहन लेते हैं। आपका हमें नहीं चाहिए, जरा भी नहीं चाहिए। हमें चाहिए तो मिशन के लिए चाहिए।

मिशन की भूख है। हाँ, बेटे कितनी भूख है, कितना बड़ा पेट है इसका कि आप उसकी कल्पना नहीं कर सकते। कितना हमको यहाँ बनाना है। अभी यहाँ कुटिया बन रही है। हमको निर्माण कराना है। भवन बनाने हैं। क्यों? आप इतने का क्या करेंगे? हम बता रहे हैं न कि इतनी हमारी भूख है। इतने कार्यकर्त्ता जो हमने आह्वान किया है कि अभी नहीं तो फिर कभी भी नहीं।

समय है सँभल जाओ

अब समय है सँभल जाओ, यह महत्त्वपूर्ण समय है, मिशन की यह आवश्यकता है। हम यह माँगते हैं कि आपने इतना कमा लिया है कि आपके बीबी-बच्चे खा सकते हैं, फिर आपको क्या जरूरत है कोल्हू के बैल के तरीके से लगने की? चलो, आप समाज की सेवा कीजिए, घर में से निकलिए, आप यहाँ आ जाइए। आपको मोह नहीं छोड़ता है, नाती-पोते को नहीं छोड़ते तो यहाँ तो छोड़ेंगे। यहाँ आइए, पर हमको कोई ऐसे बुड्ढा-बुड्ढी नहीं चाहिए, जिनको कि दूसरे ही दिन हमें गंगाजी पहुँचाना पड़े, ऐसे नहीं चाहिए।

एक दुःखी व्यक्ति किसी महापुरुष के पास गया और उनसे सुखी रहने का उपाय पूछने लगा। महापुरुष ने उत्तर दिया—"तुम किसी सुखी व्यक्ति का कुरता ले आओ, उसे पहनकर तुम भी सुखी हो जाओगे।" दुःखी व्यक्ति ऐसा कुरता पाने के लिए कई स्थानों पर भटकता रहा। अंत में उसे एक साधु दिखाई पड़ा, जो प्रसन्नचित्त था।

उसने उस साधु से उसका कुरता माँगा तो पता चला कि उसके पास तो कोई वस्त्र ही नहीं है। मात्र एक धोती, वह पहने हुए था। उसने सारा विवरण उस साधु को कह सुनाया।

साधु बोला—"पुत्र! दुःख तो संग्रह में ही है। सुखी तो मात्र वह ही रह सकता है, जो अंदर से निश्चिंत है और संसार में किसी वस्तु की कामना उसे नहीं है। जो निर्लिप्त है, निर्विकार है, वही सुखी है।"

दुःखी मनुष्य दुःखों का कारण समझ गया और हँसता-मुस्कराता महापुरुष के पास वापस लौट गया।

उससे सारा विवरण जानकर महापुरुष बोले—"पुत्र! यही सूत्र सुखी रहने का उपाय है। इसी का पालन कर सभी ज्ञानीजन जीवन भर सुखी रह पाते हैं।"

हमें जीवंत व्यक्ति चाहिए, जीवंत कार्यकर्त्ता चाहिए, जिनमें जीवट हो और जीवट नौजवान में होगी, नौजवान में जीवट होगी तो हम उन नौजवानों

से भी कहेंगे, हम अधेड़ों से भी कहेंगे। जिनकी नार बिलकुल हिल गई है, उनको तो जाने दीजिए, जिनकी पेंशन हो गई है, वह फिर क्या काम करेगा? वह तो हो गया बूढ़ा। बूढ़ा हो गया तभी तो उसको नौकरी से निकाला गया। उसमें उतनी जान नहीं, पर हमको जानदार व्यक्तित्व चाहिए और वह जानदार हमें आप में से चाहिए। आप निकल करके आइए, आपके लिए यह युग की माँग है, मिशन की माँग है, यह देश की माँग है।

हमें राष्ट्र का काम करना है। राष्ट्र का काम करना है तो क्या हम घर में बैठ करके काम करेंगे? गुरुजी ने घर में बैठ करके काम किया था क्या? घर में बैठ करके काम नहीं किया था। घर में बैठ करके केवल उन्होंने 24-24 लक्ष के 24 पुरश्चरण किए थे।

पुरश्चरण के बाद उनके गुरुदेव की जो आज्ञा हुई थी, वह काम उन्होंने शुरू किया। फिर उन्होंने कहा कि गायत्री मंदिर बनना चाहिए। गायत्री मंदिर बना, फिर उन्होंने कहा कि भाई यज्ञ होना चाहिए।

यज्ञों की शृंखला शुरू हुई। जिस यज्ञ को कोई जानता भी नहीं है और जिस यज्ञ की परंपरा ही समाप्त हो गई, उन परंपराओं को शुरू करना कितना कठिन काम था। वह सारे-के-सारे यज्ञीय जीवन, त्यागमय जीवन, समर्पित जीवन जीने के लिए उन्होंने प्रेरित किया। उन्होंने यज्ञों की परंपरा डाली। फिर दीपयज्ञों की परंपरा डाली। उन्होंने कहा कि इसमें घी और सामग्री ज्यादा खरच होती है। लोग यह कहते हैं कि घी जलता है, अच्छा तो घी नहीं जलाएँगे, दीपक जलाएँगे।

दीपक का मतलब स्नेह होता है। उसमें घी और तेल भरा रहता है, तेल का मतलब है स्नेह से लबालब, प्यार से लबालब भरा हुआ। तेल और बाती के तरीके से जलिए और दूसरों को रोशनी दीजिए, प्रकाश दीजिए। आप दे सकते हैं चाहे छोटी हैसियत के ही क्यों नहीं हैं? बड़े लोग ही काम कर पाएँगे? बड़े नहीं कर पाएँगे? छोटे ही काम करेंगे।

राष्ट्रदेवता पर श्रद्धासुमन अर्पित करें

गुरुजी ने बचपन से काम किया था। तो क्या अपने घर में रहे? वे तो जमींदार थे, लेकिन उन्होंने अपने घर में से एक थाली भी नहीं ली। एक लोटा लेकर के घर से निकले थे। आगरा में जाकर के लोहे के तसले में आटा गूँधा था, क्योंकि उनकी माताजी यह कहा करती थीं कि जब स्वतंत्रता मिल जाएगी तो यह राजा बनेगा और इसकी पत्नी बनेगी रानी। अब बेचारी कहे नहीं तो क्या कहे। उसका एक बेटा और वो भी कांग्रेस आंदोलन में इधर-उधर घूमे तो घर की परवाह कौन करे? उनका भी कहना सही था।

आचार्य जी एक लोटा लेकर घर से निकले और आज इतना बड़ा वैभव आप देख रहे हैं। यहाँ से लेकर के, गायत्री तपोभूमि से लेकर के और आँवलखेड़ा से लेकर के ये सारा-का-सारा पसारा आप देख रहे हैं, उनकी तपश्चर्या का, उनकी निस्स्वार्थ भावना का है। ये तो आपकी जेबों का भी है। साहब! हमने दिया था, हाँ तुमने दिया था और किसी को दिया था क्या? या सिर्फ अपने रिश्तेदारों को ही दिया है? जबरदस्ती गले पकड़कर डलवाया गया है। आपने अपनी राजी से दिया है? अपनी राजी से नहीं दिया, थपेड़ों ने निकलवाया है।

बेटे, आपसे निकलवाया गया है, कंजूस कहीं के, निकाल, सारा तेरे लिए नहीं है। तुमने बड़े-बड़े मिल और कारखाने इकट्ठे कर लिए हैं, अब तेरे कारखाने, मिलें देखे जाएँगे। अभी तो पिता के पड़े

थे, अब माँ के भी पड़ेंगे तब तुम्हें अच्छे तरीके से आनंद आएगा। मारती तो मैं किसी को नहीं, मेरे हाथ चलते हैं कभी?

मैंने कभी किसी को नहीं मारा। मैं प्यार से ही बोलती हूँ, लेकिन वाणी भी ऐसी होती है, जो कभी-कभी मार का काम कर जाती है और वाणी नहीं करती है, तो परोक्ष रूप काम करता है। प्रत्यक्ष से न माने तो परोक्ष से मान। बेटा! जब तू सोएगा और जब हम नहीं रहेंगे तो भूत बनकर तेरे घर में आएँगे।

हम और गुरुजी भूत बन करके आएँगे और एक इधर से और एक उधर से पड़ेगा, तो नानी याद आ जाएगी। अरे भूत दिख रहा है, माताजी दिख रही हैं, गुरुजी दिख रहे हैं, अरे जी! क्या हो गया? भूत दिख रहा है। मत बनवावे भूत, बेटा! हम जहाँ जैसे हैं, वैसे ही हमको रहने दो; लेकिन अब कार्य के लिए आपको आगे आना ही पड़ेगा और आपको आना ही चाहिए।

उनकी पुण्यतिथि पर आप संकल्प करें कि हमको ज्यादा-से-ज्यादा राष्ट्र का काम करना है। हमें राष्ट्र इतना प्यारा है, राष्ट्रदेवता पर, युगदेवता पर आप श्रद्धा-सुमन चढ़ाएँ। आप श्रद्धा तो दे सकते हैं, आपको पैसे की किसने कहा है? पैसे हों तो पैसे भी दीजिए, पर आप श्रद्धा तो दे सकते हैं, आप भावनाएँ तो दे सकते हैं, आप अपने हाथ-पाँव तो दे सकते हैं। हाथ-पाँव भी नहीं दे सकते? आप हाथ-पाँव दीजिए और काम करिए, सहयोग आपको मिलेगा। अरे! इतना अपार सहयोग मिलेगा आपको कि आपसे सहयोग सँभाला भी नहीं जाएगा, इतना सहयोग मिलेगा। अभी हम जीवित हैं, गुरुजी की शक्ति है, देखो होता है कि नहीं होता?

(क्रमशः अगले अंक में समापन)

राजा उत्तानपाद अपनी छोटी रानी सुरुचि से अत्यंत प्रेम करते थे। एक दिन बड़ी रानी सुनीति का पाँचवर्षीय पुत्र ध्रुव पिता की गोद में आ बैठा। सुरुचि ने उसे गोद से उतारते हुए कहा—"यदि पिता की गोद या सिंहासन चाहिए तो भगवान से प्रार्थना करो और अगली बार मेरे पुत्र के रूप में जन्म लो।"

दुःखी होकर ध्रुव ने जाकर अपनी माता को सारी बात बताई। सुनीति ने कहा—"विमाता ने ठीक ही कहा है, भगवान की भक्ति से ही श्रेष्ठ पद की प्राप्ति संभव है।" माँ की बात सुनकर ध्रुव वन की ओर चल पड़ा। मार्ग में उसे देवर्षि नारद मिले। नारद जी ने पहले तो उसे समझाकर घर लौटने के लिए कहा। परंतु उसके न मानने पर उन्होंने मंत्र की दीक्षा देकर उसे मधुवन में तपस्या करने के लिए कहा। ध्रुव ने भूखे-प्यासे रहकर कठोर तप किया। उसके तप व भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान ने उसे दर्शन दिए और यह वरदान दिया कि वह समस्त ऋषिलोकों से ऊपर ध्रुवलोक का अधिकारी बनेगा। ध्रुव कृतार्थ होकर वापस लौटे तो विमाता के चरणस्पर्श करते हुए बोले—"यदि आप उस दिन मुझे प्रेरणा नहीं देतीं तो मैं भगवान की कृपा प्राप्त करने हेतु तत्पर नहीं होता।"

नदियों एवं समुद्रों में दैवी प्रकाश

नदियों एवं समुद्रों की जलराशि में दैवी प्रकाश इनकी स्थिति व अवस्था में अनेकों सकारात्मक परिवर्तन उत्पन्न करेगा। हम सभी को यह सत्य पता है कि नदियाँ और समुद्र धरती की प्राय: समूची जलराशि को अपने में समेटे हुए हैं। सरोवरों व कूपों-बावड़ियों में जल का बहुत छोटा-सा हिस्सा ही सिमटा है। वैसे भी आजकल कूप व बावड़ियाँ बहुत ही नगण्य व निरुपयोगी होकर रह गए हैं। बात नदी की करें तो यह भूतल पर प्रवाहित जलधारा है; जिसका स्रोत प्राय: कोई झरना, झील, हिमनद अथवा बारिश का पानी होता है। यह अपनी यात्रा की समाप्ति अवश्य किसी झील या सागर में करती है। सागर से तात्पर्य उस जलराशि से है, जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है। साथ ही जो इस पृथ्वी तल के प्राय: तीन-चौथाई हिस्से में व्याप्त है।

धरती के परिदृश्य में लगभग 165 नदियाँ प्रवाहित हैं। अगर विश्व के अलग-अलग भू-भागों में प्रवाहित मुख्य नदियों का क्रम देखें, तो (1) एशिया में प्रमुखतया—आमूर, ह्वांगहो, ब्रह्मपुत्र, गंगा, यमुना, कावेरी, लेना, नर्मदा, सिंधु, यांगत्सी, मेकोग का प्रवाह मिलता है। (2) अफ्रीका में नील, कांगो, नाइजर, लिपोपो, जांबेजी प्रवाहित हैं। (3) उत्तर अमेरिका में मिसीसिपी, हडसन, डेलावर, मैकेंजी नाम की नदियों की जलधारा है। (4) दक्षिण अमेरिका में अमेजन नदी ही मुख्य है। (5) यूरोप में वोल्गा, थेम्स व यूराल का प्रवाह है। (6) ऑस्ट्रेलिया की मुख्य नदी मर्रे डार्लिंग है।

समुद्र के संदर्भ में सोचें, तो समस्त संसार एक ही समुद्र से घिरा हुआ है, लेकिन सुभीते के लिए उसके पाँच बड़े भाग कर लिए गए हैं और इनमें से प्रत्येक भाग महासागर कहलाता है। पहला भाग जो अमेरिका से यूरोप और अफ्रीका के मध्य तक विस्तृत है—एटलांटिक महासागर कहलाता है। दूसरा भाग जो अमेरिका और एशिया के मध्य में है—पैसिफिक या प्रशांत महासागर कहलाता है।

तीसरा भाग जो अफ्रीका से भारत और ऑस्ट्रेलिया तक है, इंडियन या भारतीय समुद्र हिंद महासागर कहलाता है। चौथा समुद्र जो एशिया, यूरोप और अमेरिका, उत्तर तथा उत्तरी ध्रुव के चारों ओर है—आर्कटिक या उत्तरी महासागर कहलाता है और पाँचवाँ भाग जो दक्षिणी ध्रुव के चारों ओर है, एंटार्कटिक या दक्षिणी समुद्र कहलाता है। परंतु आजकल लोग प्राय: उत्तरी समुद्र और दक्षिणी समुद्र—ये दो ही समुद्र मानते हैं; क्योंकि शेष तीनों दक्षिणी समुद्र से बिलकुल मिले हुए हैं। दक्षिण की ओर उनकी कोई सीमा नहीं है। समुद्र के जो छोटे-छोटे टुकड़े स्थल में अंदर की ओर चले जाते हैं, वे खाड़ी कहलाते हैं।

गहराई की दृष्टि से विचार करें, तो सागर की कम-से-कम गहराई 12,000 फुट और अधिक-से-अधिक गहराई प्राय: 30,000 फुट है। समुद्र में उठने वाली लहरें जमीन की ऋतुओं पर अपना असर डालती हैं। भिन्न-भिन्न अक्षांशों में समुद्र के ऊपरी जल का तापमान अलग-अलग होता है। गुण की दृष्टि से देखें, तो समुद्र के सभी स्थानों का जल

बिलकुल एक-सा और समान रूप से खारा होता है। समुद्र के जल में सब मिलाकर उनतीस तरह के भिन्न-भिन्न तत्त्व हैं, जिनमें क्षार या नमक प्रधान है।

नदियाँ हों या सागर, मानव जीवन एवं धरती के पर्यावरण के लिए इनका विशेष महत्त्व है। पारिस्थितिकी तंत्र एवं जैव-विविधता के लिए इनकी भूमिका समय के सभी आयामों में है। विश्व का कोई भी भू-भाग हो, कहीं की भी कोई संस्कृति हो—सभी स्थानों पर नदियों एवं समुद्रों का महत्त्व कहा गया है।

विज्ञान एवं वैज्ञानिक तो इनका विविध रूपों में आकलन, अन्वेषण, अनुसंधान करते ही हैं। इसके विविध आयामों के गुण-दोषों, हानि-लाभों पर विचार करते हैं, अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं, यह सभी को पता है, लेकिन प्राय: सभी देशों की लोक-कथाओं, साहित्य, काव्य में भी इनका स्मरण कम नहीं किया गया है। अलग-अलग धर्मों एवं उनकी पुराणकथाओं में इनके दैविक रूप का भी महत्त्व स्वीकारा गया है।

यह स्वीकारोक्ति आज के युग में भौतिक एवं आर्थिक रूप से तो यथावत् है, लेकिन हमारी भावनाओं में यह महत्ता अवश्य कम हुई है। तभी नदियाँ व समुद्र, दोनों ही प्रदूषित व विक्षुब्ध हो चले हैं। सूखा-बाढ़, समुद्री तूफान एवं अलग-अलग तरह के चक्रवात इसी का परिणाम हैं।

पुराणों की कथाएँ बताती हैं कि कभी असुरों का नदियों व समुद्रों पर आधिपत्य होने के कारण पहले कभी यह स्थिति बन गई थी। एक कथा के अनुसार यमुना में कालिया नाग के वास के कारण यमुना विषैली हो गई थी। आज की दशा में अकेली यमुना ही नहीं, प्राय: सभी नदियाँ प्रदूषित और विषैली हो गई हैं और कालिया का आसुरी विष हमारे मनों में प्रवेश कर हमारे अपने ही हाथों से नदियों में बहने वाली जलधारा, जीवनधारा को प्रदूषित कर रहा है।

समुद्र की कथा कहती है कि किसी युग में समुद्र में निवात कवच नाम के असुर जाकर छिप गए थे, जो रोज-रोज नए-नए उपद्रव किया करते थे। बाद में महर्षि अगस्त्य की सहायता से देवों के राजा इंद्र ने इनका वध किया था। कालिया नाग के विष का दमन और शमन भगवान श्रीकृष्ण द्वारा किया गया था।

विश्व की प्राय: सभी महान संस्कृतियाँ नदियों के किनारे ही जन्मीं और विकसित हुई हैं। भारत देश ने तो सदा से इन्हें देवी रूप में ही देखा है। वेदकाल के हमारे ऋषियों ने पर्यावरण-संतुलन के सूत्रों के दृष्टिगत नदियों-समुद्रों सहित पूरे संसार की ओर देखने की सहअस्तित्व की विशिष्ट अवधारणा को विकसित किया है। उन्होंने पाषाण में भी जीवन देखने का जो मंत्र दिया, उसके कारण भारत भूमि में प्रकृति को समझने व उसके व्यवहार करने की परंपराएँ जन्मीं।

प्राय: सभी देशों की लोक-कथाओं, साहित्य, काव्य में भी इनका स्मरण कम नहीं किया गया है। अलग-अलग धर्मों एवं उनकी पुराणकथाओं में इनके दैविक रूप का भी महत्त्व स्वीकारा गया है। यह स्वीकारोक्ति आज के युग में भौतिक एवं आर्थिक रूप से तो यथावत् है, लेकिन हमारी भावनाओं में यह महत्ता अवश्य कम हुई है। तभी नदियाँ व समुद्र, दोनों ही प्रदूषित व विक्षुब्ध हो चले हैं। सूखा-बाढ़, समुद्री तूफान एवं अलग-अलग तरह के चक्रवात इसी का परिणाम हैं।

ऋग्वेद एवं अथर्ववेद में अनेक नदियों का उल्लेख है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में **सप्त सिन्धवः** का कई बार उल्लेख है। एक मंत्र में कहा गया है—'**हिमवतः प्रस्रवन्ति सिन्धौ समह संगमः**'—अथर्ववेद 6.24.1। ये सात नदियाँ हिमालय से निकलती हैं और समुद्र में मिलती हैं।

ऋग्वेद का 10.75 सूक्त 'नदी सूक्त' कहा जाता है, इसमें एक साथ अनेक नदियों का उल्लेख है।

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति, शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्णाया। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

—ऋग्वेद 10.75.5

इसमें इन नदियों का उल्लेख है—गंगा, यमुना, सरस्वती, सतलज (शुतुद्रि), परुष्णी (इरावती या रावी), असिक्नी (चंद्रभागा या चिनाव), मरुद्वृधा (मरुवर्दवन, चिनाव की सहायक नदी), वितस्ता (झेलम), आर्जीकीया (झेलम और सिंध के बीच की एक नदी), यास्क ने इसे विपाशा अर्थात व्यास माना है एवं सुषोमा (अटक जिले में बहने वाली सोहान नदी)।

समुद्र की चर्चा करें, तो ऋग्वेद में 'समुद्र' शब्द 133 बार आया है। भारत देश के इतिहास, साहित्य एवं संस्कृति में नदियाँ यदि देवियाँ हैं, तो समुद्र देवता। रामायण की रामकथा में इन्होंने प्रकट होकर भगवान श्रीराम की सहायता की थी। इन्हें जलधि, जलनिधि, नीरनिधि, उदधि, नदीश, वारीश आदि नामों से स्मरण किया गया है।

ऋग्वेद एवं अथर्ववेद में दो, तीन और चार समुद्रों का उल्लेख है। **उभौ समुद्रावा०**—ऋग्वेद 10.136.5। **त्रीन समुद्रान्,**—अथर्ववेद। **चतुरः समुद्रान्**—अथर्व० 19.27.3। इस विवरण के साथ ऋग्वेद (1.47.6) और अथर्ववेद (4.10.4 और 5) में समुद्र से प्राप्त होने वाले रत्नों का भी उल्लेख है। इसीलिए इसका एक नाम रत्नाकर भी है।

ऋग्वेद और यजुर्वेद में उल्लेख है कि समुद्र में निधि है। चारों समुद्रों में रत्न आदि धन हैं—**चतुः समुद्रं धरुणं रयीणाम्**—ऋग्वेद 10.47.2। सूर्य से समुद्रों को ऊर्जा प्राप्त होती है—**सं सूर्येण दिद्युतद् उदधिर्निधिः**—यजुर्वेद 38.22।

नदियों से जीवन के विविध रूप, समुद्र से धन और रत्न के भंडार अब केवल अवशेष रूप में बचे हैं। नदियों की प्रदूषित स्थिति एवं समुद्रों में प्रदूषण व विक्षोभ—यही अवस्था वर्तमान ने प्रकट की है। दैवी प्रकाश एवं मानवीय प्रयास से ही इस स्थिति व अवस्था में परिवर्तन संभव है।

एक बार प्रजाजनों ने आरोग्यरक्षा की सरल विधि की जिज्ञासा व्यक्त की, जिस पर ऋषि बोले—

सर्वेषाम् भेषजम् अप्सु मे।
जीवनां जीवनम् जीजोगत्॥

हे मनुष्यो! जल प्राणियों का प्राण है। मैंने तुम्हारे लिए सभी प्रकार की औषधियाँ जल में सुरक्षित रखी हैं।

युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव की शतवर्षीय तप-साधना से नदियों व समुद्रों की जलराशि में दैवी प्रकाश का अवतरण एक सुनिश्चित भवितव्यता बन गई है। अखिल विश्व गायत्री परिवार के जल जागरण से मानवीय प्रयास को भी इसके लिए जगाया और इस ओर प्रवर्तित किया जा रहा है। आने वाले वर्षों में इनमें आने वाले परिवर्तन नदियों की जलधारा को जीवनधारा एवं समुद्रों की जलराशि में रत्नराशि व जीवन क्षमता को प्रकट किए बिना न रहेंगे। यह प्रकाश व प्रयास वन-उपवन में भी जीवन की महिमा व महत्ता को प्रदर्शित किए बिना न रहेगा। ❑

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

उद्देश्यपूर्ण जीवन का आधार

प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो से किसी ने प्रश्न किया—"मैं जीवन में सुखी व आनंदित कैसे हो सकता हूँ?" प्लेटो ने गंभीरतापूर्वक उत्तर दिया—"यदि तुम वह बन जाओ, जो बनने के लिए तुम पैदा हुए थे तो तुम जीवन में आनंद को प्राप्त कर लोगे।"

सुनने-पढ़ने में सरल-सा दिखने वाला यह सूत्र, मनुष्य के लिए कठिन इसलिए बन जाता है, क्योंकि हम जीवन को बिना किसी रणनीति के, बेहोशी में जीते हुए नजर आते हैं। जीवन को, उसकी वास्तविकता को, उसकी संभावनाओं को समझे बिना ही हम जीवन के रणक्षेत्र में उतर जाते हैं और अपने जीवन का एक बड़ा हिस्सा, निरर्थक व दिशाविहीन कार्यों को करने में गुजार देते हैं।

जीवन जीने का अर्थ मात्र साँसों का चलना व दिल का धड़कना नहीं होता, वरन जीवन जीने का अर्थ—उसको एक समझ के साथ, एक उद्देश्य के साथ जीना होता है। इस उद्देश्य को जीवन में, अपने दृष्टिकोण में उतारने से हम वंचित रह जाते हैं; क्योंकि हम अपना समय जीवन को उद्देश्यपूर्ण तरीके से जीने के स्थान पर, उसे तृप्त करने में गुजार देते हैं।

यदि हमारी सारी कामनाएँ पूरी भी हो जाएँ तो इसका अर्थ जीवन के उद्देश्य का मिल जाना नहीं है। अपने पुत्र-पौत्रों का जीवन ले लेने के बाद भी ययाति को असंतोष का ही सामना करना पड़ा। कीचक यों ही तड़पते हुए मरा। सिकंदर को खाली हाथ रोते हुए जाना पड़ा।

जीवन का उद्देश्य—मात्र कपोल कल्पनाएँ व निराधार इच्छाएँ करना नहीं है। सच तो ये है कि हमें वो नहीं मिलता, जो हम चाहते हैं या जिसकी हम कामना करते हैं, बल्कि हमें वो मिलता है, जो हमारे आंतरिक विकास के लिए आवश्यक होता है।

जीवन को उद्देश्यपूर्ण तरीके से जीने के लिए, कुछ ऐसे सरल-सहज उपाय हैं, जिनके अनुपालन से जीवन में दिशा व उद्देश्य स्वतः ही प्रकट हो जाते हैं। इन्हें कुछ इस प्रकार समझा जा सकता है।

(1) जिम्मेदारी लेना सीखें—स्वयं के द्वारा किए गए कार्यों की जिम्मेदारी हम यदि उठाना नहीं सीखेंगे तो जीवन में अपने विकास की राहों को सदा के लिए अवरुद्ध कर लेंगे। हम लोग अच्छा घटने पर तो श्रेय लेने को उत्सुक दिखते हैं, पर जीवन में बुरा होने पर उसकी जिम्मेदारी किसी दूसरे व्यक्ति, घटनाक्रम से लेकर भगवान पर डालना चाहते हैं।

अपने कार्यों की जिम्मेदारी को स्वीकार करना, बड़े साहस का कार्य है और ऐसा करने का उद्देश्य हमारे मन में कहीं गहरे बैठ गई नकारात्मकता से मुक्त होना भी है। अपने द्वारा किए गए कार्यों की जिम्मेदारी वही उठा सकता है, जिसे ईश्वर के बनाए सिद्धांतों, कर्मफल विधान, परमात्मा की कण-कण में उपस्थिति—जैसे शाश्वत सूत्रों पर गहन आस्था हो।

जो व्यक्ति जिम्मेदारी लेना सीख जाते हैं, वो जीवन में विषम घटनाक्रम आने पर उनका स्रोत

अपने व्यक्तित्व में ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं व उनका समाधान भी स्वयं के अंतस् में ही ढूँढ़ते हैं।

सत्य यही है कि बाहर घटते घटनाक्रम, चित्त में उभरते शुभ व अशुभ कर्मों की परछाईं मात्र होते हैं और यदि हम इस सत्य को समग्रता से अनुभव करते हैं तो हम कठिन परिस्थितियों का सामना, अपने व्यक्तित्व के परिष्कार को करके, शुभकर्मों को करके-करना चाहते हैं और ऐसा करने के लिए निष्पक्ष आत्मसमीक्षा करते हुए अपने कर्मों की जिम्मेदारी लेने का भाव हमारे मन में विकसित होना चाहिए। ऐसा होने पर हम शिकायतें करने व आरोप लगाने के स्थान पर, अपना विकास व परिष्कार करने की सोचते हैं, जो कि स्थायी व सही समाधान है।

(2) वर्तमान में जीना सीखें—हमारी ज्यादातर ऊर्जा, भविष्य के सपने सँजोने व अतीत की कल्पनाएँ करने में चली जाती है और इसलिए हम वर्तमान में कर रहे कार्यों के लिए कभी भी समुचित रूप से उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। वर्तमान में जीने का अर्थ अपनी चेतना को उपस्थित क्षण के लिए समग्रता से उपलब्ध कराने से है।

यदि हम बैठकर मात्र सपने ही देखते रहेंगे तो उनको पूरा करने के लिए जुट पाने का कार्य कब कर पाएँगे। वर्तमान में जीने के लिए हमें ईश्वरीय व्यवस्था पर अटूट विश्वास की आवश्यकता होती है। हम ज्यादातर समय जीवन को और अपनी परिस्थितियों को एक झूठी मान्यता के तहत देखते हैं—जिसके अनुसार, हमारे जीवन में घटती हर घटना के लिए कोई और जिम्मेदार है।

जब हम भगवान के प्रति कृतज्ञ होकर, जीवन जैसा है—उसे अंगीकार करने को तैयार हो जाते हैं तो हमारे भीतर सच्चा समर्पण उदय होता है और तब हम वर्तमान के क्षणों का सम्यक उपयोग कर पाते हैं। समर्पण का अर्थ सब कुछ दूसरों पर छोड़कर आलसी हो जाना नहीं है, वरन समर्पण का अर्थ—घटनाओं पर हमारे नियंत्रण के भ्रम को छोड़ना है, ऐसा करने पर हम ईश्वर के विराट स्वरूप से स्वयं को जोड़ पाते हैं, मन को व्यर्थ के भ्रमों और सपनों से मुक्त कर पाते हैं और तब ही हम जीवन के प्रत्येक क्षण का, हर क्षण उपस्थित-वर्तमान क्षण का, श्रेष्ठतम उपयोग कर पाते हैं।

(3) स्वयं के प्रति सच्चा दृष्टिकोण अपनाएँ—हम जीवन को एक अभिनय की तरह से जीते हैं। माता-पिता के साथ कुछ और, मित्रों के साथ कुछ और, संबंधियों के साथ कुछ और—कई तरह के जीवन जीते-जीते, धीरे-धीरे हम स्वयं के प्रति भी अभिनय करना शुरू कर देते हैं और हमारा स्वयं के प्रति दृष्टिकोण भ्रांतिपूर्ण हो जाता है।

हमें स्वयं की त्रुटियाँ दिखाई नहीं पड़तीं, हमारा अहंकार बुलंद हो जाता है और धीरे-धीरे, हमारे अंतर्मन के टोकने की आवाज भी हमें सुनाई नहीं पड़ती। स्वयं के प्रति हमारा नजरिया सच्चा रहे, इसके लिए आवश्यक है कि हम—हमारे अंदर बह रहे सकारात्मक व नकारात्मक विचारों को पहचानें। सकारात्मक विचार जीवन को स्वीकारना सिखाते हैं व नकारात्मक विचार, जीवन को नकारना सिखाते हैं।

इस सृष्टि के शाश्वत सिद्धांतों में से एक यह सिद्धांत भी है कि हम जैसा सोचते हैं, वैसा करते हैं और जैसा करते हैं, वैसे ही भविष्य का निर्माण करते हैं। यदि हम नकारात्मक सोच रहे हैं तो यह सोच, धीरे-धीरे हमारे संपूर्ण व्यक्तित्व को कालिमा से भर देती है। इसलिए इसे प्रारंभ में ही पहचान कर, अपने व्यक्तित्व से झटककर दूर कर देना चाहिए।

(4) भगवान पर आस्था रखें—मनुष्य जिस भी शक्ति को अपनी जीवन नियामक सत्ता मानता हो, उसके प्रति सच्ची आस्था कठिन-से-कठिन समय में भी, हमें हमारे जीवन के उद्देश्य से दूर नहीं होने देती। भगवान का अर्थ किसी पौराणिक किरदार से नहीं, बल्कि सच्चे व शुभ सिद्धांतों व गुणों के शाश्वत प्रतिनिधित्व से है और सच्ची आस्था के लिए हमारे भीतर राह की बाधाओं से जूझने के लिए संकल्प बल की आवश्यकता होती है।

जब हम इस भाव को पूर्ण विश्वास के साथ जन्म देते हैं तो हमारी, जीवन के प्रति सोच व दृष्टिकोण बदल जाते हैं। सूत्र सरल है, पर जीवन में सच्चा व सुखद दिशाबोध तभी जगा पाते हैं जब हम मन में यह ठान लें कि हम जीवन को एक गहरे व उच्च उद्देश्य के साथ जिएँगे। कर्मों की जिम्मेदारी उठाने का भाव हमारे मन में विकसित हो, हम ईश्वरीय चेतना में आस्था रखते हों, स्वयं की निरंतर-निष्पक्ष आत्मसमीक्षा करते हों व वर्तमान के क्षण के प्रति समर्पित हों—तो जीवन उद्देश्यपूर्ण बन जाता है और जिसके जीवन में उद्देश्य आ जाता है, उसके जीवन में एकाग्रता, स्थिरता, शांति व आनंद आ जाते हैं। आनंदमय जीवन के लिए ये ही सरल समाधान सूत्र हैं। ❑

एक संत ने एक विद्यालय प्रारंभ किया, जिसका उद्देश्य था—संस्कारी युवक-युवतियों का निर्माण। एक दिन उन्होंने अपने विद्यालय में एक वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया, जिसका शीर्षक था—'प्राणिमात्र की सेवा।' निर्धारित दिन वाद-विवाद प्रतियोगिता प्रारंभ हुई, जिसमें बोलने के लिए कई विद्यार्थी मंच पर आए और एक से बढ़कर एक उद्‌बोधन देकर भी गए, परंतु जब पुरस्कार देने का समय आया तो संत ने पुरस्कार एक ऐसे विद्यार्थी को दिया, जो प्रतियोगिता में सम्मिलित ही नहीं हुआ था। यह देखकर विद्यार्थियों में और कुछ शैक्षणिक सदस्यों में रोष के स्वर उठने लगे। उनमें से कुछ मिलीभगत का आरोप भी लगाने लगे। उन्हें शांत कराते हुए संत बोले—''प्यारे मित्रो एवं विद्यार्थियो! इस प्रतियोगिता स्थल के द्वार पर मैंने एक घायल बिल्ली को रख दिया था। तुम सब उसी द्वार से अंदर आए, पर किसी ने भी उस बिल्ली की ओर आँख उठाकर नहीं देखा। यही छात्र एकमात्र ऐसा था, जिसने वहाँ रुककर उसका उपचार किया और उसे सुरक्षित स्थान पर छोड़कर आया। सेवा-सहायता उद्‌बोधन का विषय नहीं, जीवन जीने की कला है। जो अपने आचरण से शिक्षा देने का साहस न रखता हो तो उसके वक्तव्य कितने भी प्रभावी क्यों न हों, वे पुरस्कार पाने के योग्य नहीं हैं।'' सत्य का पता चलते ही रुष्ट विद्यार्थियों एवं शिक्षकों की गरदन शरम से नीची हो गई और वे पुरस्कृत विद्यार्थी के व्यवहार के प्रति नतमस्तक हो गए।

गीता का दर्शन

करो प्रार्थना समझ कार्य सब, लाना यह सुविचार है।
अजर अमर अविनाशी आत्मा, ही गीता का सार है॥

नैतिकता का मानव मन के, संवेदन से नाता है।
परिमार्जन जन-जन के मन का, अंतस् भेद मिटाता है।
मन के मिटने पर विराट, ब्रह्मांड प्रकट हो जाता है।
केशव से अर्जुन को यह, सद्ज्ञान समझ में आता है।
आनंद मनाएँ मद त्यागें फिर, भव से बेड़ा पार है।
अजर अमर अविनाशी आत्मा, ही गीता का सार है॥

निष्काम कर्म करने से जग में, अनाचार मिट जाता है।
मोह विसर्जन के मन का, व्यवहार सभी को भाता है।
स्नेह सौम्य सौजन्य प्रेम, इस जीवन में जब आता है।
सबके हित का शुद्ध भाव, अंतर्मन में भर जाता है।
परिष्कार जीवनशैली से, बढ़ती ख्याति अपार है।
अजर अमर अविनाशी आत्मा, ही गीता का सार है॥

माया से यह लिप्त नजर, संसार समूचा आता है।
द्वेष भाव से भरी आत्मा, में प्रपंच भर जाता है।
दुर्भावों के पोषण से मन, का विकार बढ़ जाता है।
किंतु कभी समदर्शी को, यह भेदभाव न भाता है।
उच्च चेतना से जुड़ रहना, कहिए अब स्वीकार है।
अजर अमर अविनाशी आत्मा, ही गीता का सार है॥

स्वार्थ त्याग का परहितार्थ में, बोध मुक्ति को लाता है।
जीवन कला सिखाता सबको, गीत मोक्ष के गाता है।
संकल्पित होकर मानव, जब सत्य पथों बढ़ जाता है।
अनगिन के साथी सहायकों, का सौभाग्य जगाता है।
ईश्वर मिलन लक्ष्य जीवन का, उपक्रम बारंबार है।
अजर अमर अविनाशी आत्मा, ही गीता का सार है॥

—शोभाराम शशांक

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

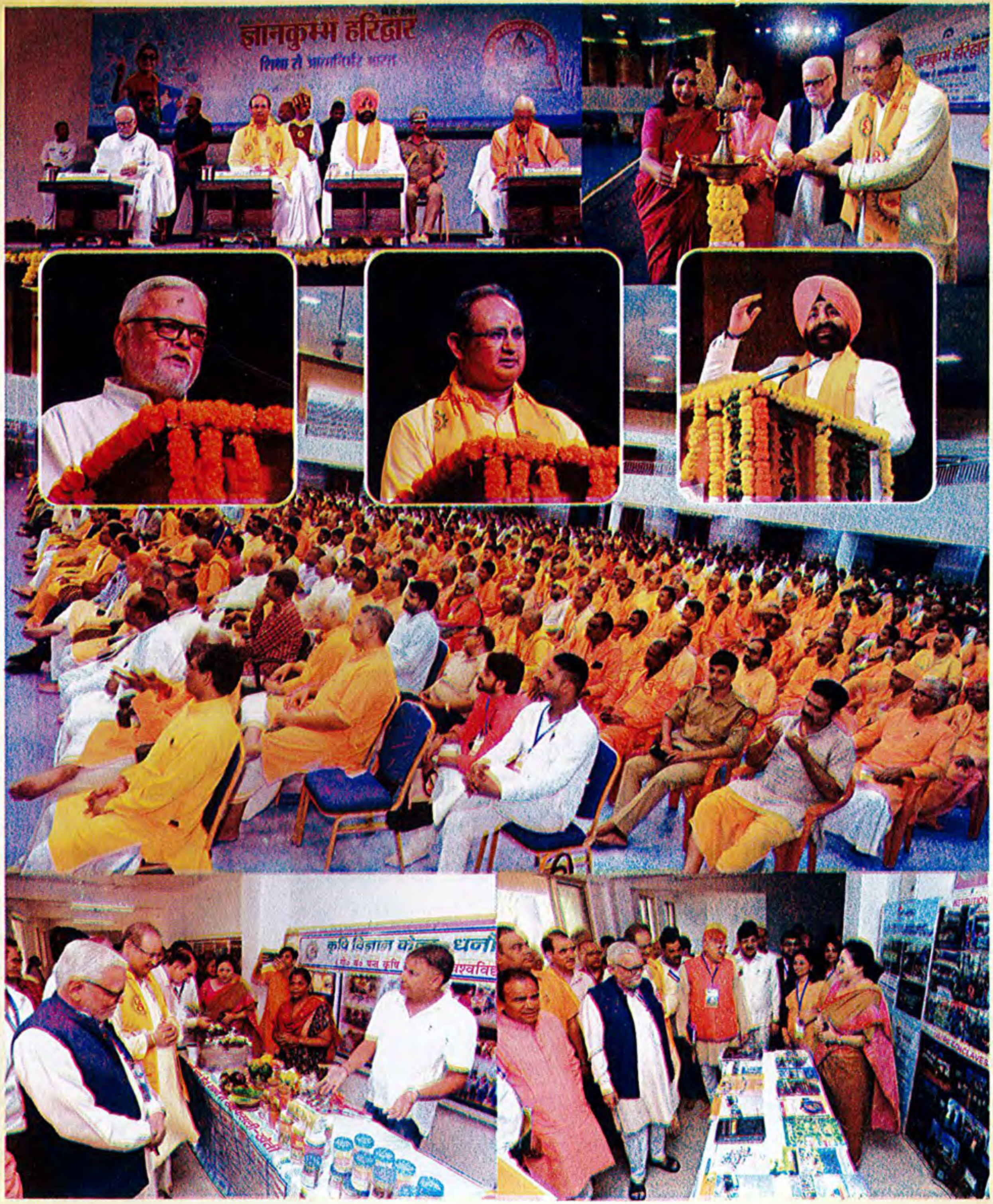

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत 'शिक्षा से आत्मनिर्भर भारत' विषय पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आयोजित

ज्ञानकुंभ हरिद्वार

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01-11-2024
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार एवं ऋषिहुड यूनिवर्सिटी, सोनीपत, हरियाणा के संयुक्त तत्त्वावधान में दे.सं. वि. परिसर में आयोजित 'लाइफ मैनेजमेंट कोर्स' भागीदार बने प्रायः 400 विद्यार्थी

आठवें भारत जल सप्ताह–2024 (8th India water Week, 2024) के कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में प्रतिकुलपति देव संस्कृति विश्वविद्यालय आदरणीय डॉ. चिन्मय पंड्या जी की भागीदारी

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक-डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 मोबाइल — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ई- मेल—akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Official Youtube Channel
Click here to subscribe Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan का एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरुदेव के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...

शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel Shantikunj Rishi Chintan को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

इस चैनल पर आप देख सकते है

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना ।

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे।

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन।

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज हरिद्वार के Official Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan पर

https://www.youtube.com/@RishiChintan

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें “!

धन्यवाद

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel